ISSN 3108-107X

आंबेडकरवादी साहित्य

Peer-Reviewed Research Journal

आंबेडकर-दर्शन पर आधारित वैचारिक, आलोचनात्मक एवं शोधपरक त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

वर्ष 6, अंक 1, जनवरी – मार्च 2026

RNI पंजीकरण क्रमांक : UPHIN/2021/89341 मूल्य : ₹60/-

'आंबेडकरवादी साहित्य' बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर की मानवतावादी विचारधारा के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित है। डॉ. आंबेडकर की विचारधारा का स्वरुप अत्यंत व्यापक है, जिसमें तथागत बुद्ध, संत कबीर, संत रविदास, ज्योतिराव फुले, नारायण गुरु, संत गाडगे और पेरियार रामास्वामी आदि महापुरुषों के दर्शन का समावेश है। अतः उक्त बात को ध्यान में रखते हुए आंबेडकरवादी साहित्य का घोषणा-पत्र तैयार किया गया है, जो अग्रलिखित है।

आंबेडकरवादी साहित्य का घोषणा-पत्र

आंबेडकरवादी साहित्य के घोषणा-पत्र में आंबेडकरवादी साहित्य (पत्रिका) का उद्देश्य निहित है।

'आंबेडकरवादी साहित्य' से संबंधित स्मरणीय बिंदु निम्नलिखित हैं-

1. आंबेडकरवादी साहित्य 'आंबेडकरवाद' का पोषक है। आंबेडकरवाद का अर्थ है- आंबेडकर का कथन यानी आंबेडकर - दर्शन। आंबेडकर-दर्शन डॉ. आंबेडकर की विचारधारा का समग्र रुप है, जिसमें बुद्ध वाणी, रविदास वाणी आदि का भी समावेश है।
2. अनीश्वरवाद, अनात्मवाद, दुखवाद, प्रतीत्य-समुत्पाद, समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, न्याय, प्रज्ञा, करुणा, शील, मैत्री आदि सभी सिद्धांत एवं मानवीय मूल्य आंबेडकर-दर्शन के अंग हैं। अतः इन सभी का आंबेडकरवादी साहित्य से घनिष्ठ संबंध है।
3. आंबेडकरवादी साहित्य सामाजिक, शैक्षिक, राष्ट्रीय एवं वैज्ञानिक चेतना का प्रेरक है।
4. आंबेडकरवादी साहित्य समाज और संस्कृति से संबंधित तथ्यपूर्ण एवं प्रामाणिक बातों तथा घटनाओं के वर्णन हेतु प्रतिबद्ध है।
5. आंबेडकरवादी साहित्य तथागत बुद्ध की प्रेरक वाणी 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय, लोकानुकंपाय' पर आधारित है। 'मूलनिवासी' अथवा 'पंद्रह-पचासी' की अवधारणा से इसका कोई संबंध नहीं है।
6. आंबेडकरवादी साहित्य में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के सम्यक साहित्य को सम्मिलित किया जा सकता है, चाहे उसका रचनाकार किसी भी वर्ग, किसी भी जाति, किसी भी धर्म का हो।
7. आंबेडकरवादी साहित्य भारतीय संविधान में वर्णित सम्यक प्रावधानों के अनुरुप रचा जाने वाला साहित्य है।
8. आंबेडकरवादी साहित्य किसी धर्म अथवा दर्शन की निंदा नहीं करता है, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर उनका सम्यक विवेचन करता है।
9. आंबेडकरवादी साहित्य में तथागत बुद्ध, संत कबीर, संत रविदास, ज्योतिराव फुले, नारायण गुरु, संत गाडगे, पेरियार रामास्वामी और डॉ. आंबेडकर आदि सत्यशोधक महापुरुषों की सम्यक वाणी का अंतर्भाव है।
10. आंबेडकरवादी साहित्य आंबेडकरवादी चेतना के साहित्यकारों, शिक्षकों, समाजसेवकों एवं संस्कृति के संरक्षकों का प्रशस्ति-पत्र है।

आंबेडकरवादी साहित्य

Peer-Reviewed Research Journal

आंबेडकर-दर्शन पर आधारित वैचारिक, आलोचनात्मक एवं शोधपरक त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

आरंभ वर्ष : अक्टूबर-दिसम्बर 2021 ❖ आवृत्ति : त्रैमासिक ❖ विषय : साहित्य ❖ भाषा : हिन्दी

वर्ष 6 | अंक 1 | जनवरी – मार्च 2026 ❖ RNI पंजीकरण क्रमांक : UPHIN/2021/89341 ❖ ISSN 3108-107X

संपादक मंडल एवं प्रकाशकीय विवरण

संपादक :

देवचंद्र भारती 'प्रखर'

मो.- 9454199538
ambedkarvadisahitya@gmail.com

संपादक मंडल :

डॉ0 दत्तात्रय मुरुमकर
प्राध्यापक हिन्दी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय
कलिना, सांताक्रूज (पूर्व), मुंबई-400098
dmurumkar.hindi@mu.ac.in

डॉ0 प्रमोद रंजन
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, असम विश्वविद्यालय
दिफू कैंपस, दिफू, असम 782462
pramod.ranjan@aus.ac.in

डॉ0 गाजुला राजू
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश 211002
raju.g@allduniv.ac.in

डॉ0 जनार्दन
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश 211002
janardan@allduniv.ac.in

डॉ0 बिजय कुमार रबिदास
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश 211002
bkrabidas@allduniv.ac.in

संरक्षक मंडल :

डॉ0 नविला सत्यादास
सेवानिवृत्त सह-प्राध्यापिका व विभागाध्यक्ष
राजकीय महींद्र महाविद्यालय, पटियाला, पंजाब

श्याम लाल राही
सेवानिवृत्त उपशिक्षा निदेशक तथा
वरिष्ठ साहित्यकार, बरेली, उत्तर प्रदेश

डॉ0 राम मनोहर राव
वरिष्ठ आंबेडकरवादी साहित्यकार
बरेली, उत्तर प्रदेश

रघुबीर सिंह 'नाहर'
वरिष्ठ आंबेडकरवादी साहित्यकार
अलवर, राजस्थान

डॉ0 रमेश कुमार
सेवानिवृत्त आयकर आयुक्त,
अहमदाबाद, गुजरात

संपादकीय कार्यालय :

19/100, भीम नगर कालोनी सनबीम वरुणा
के पास, कचहरी, वाराणसी (उ.प्र.) 221002
Website: www.ambedkarvadisahitya.com
Email: ambedkarvadisahitya@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक एवं संपादक देवचंद्र भारती, मुद्रक गौतम प्रिंटर्स, सी.27/111-बी, जगतगंज, वाराणसी, (उ.प्र.)-221002 से मुद्रित एवं शी 19/100, भीम नगर कालोनी सनबीम वरुणा के पास, कचहरी, वाराणसी (उ.प्र.) 221002 से प्रकाशित।

संपादक- देवचंद्र भारती

आंबेडकरवादी साहित्य

Peer-Reviewed Research Journal

आंबेडकर-दर्शन पर आधारित वैचारिक, आलोचनात्मक एवं शोधपरक त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

विषय सूची -

1. **संपादकीय :** आंबेडकरवादी साहित्य : प्रतिरोध नहीं, पुनर्रचना का अनुशासन 3

2. **आंबेडकरवादी विमर्श :** आंबेडकरवादी साहित्य : अवधारणा, सीमा और प्रतिमान
– देवचंद्र भारती 'प्रखर' 4

3. **शोध-पत्र :** आंबेडकरवादी चेतना का काव्यात्मक रूप : दामोदर मोरे का अध्ययन
– डॉ० तात्याराव सूर्यवंशी 6

4. **शोध-पत्र :** श्यामलाल राही की ग़ज़लों में प्रतिरोध, राजनीतिक विडंबना और आंबेडकरवादी चेतना का स्वर– डॉ. दुर्गेश कुमार राय 11

5. **शोध-पत्र :** इक्कीसवीं सदी की आंबेडकरवादी आत्मकथाओं में अनुभव का वैचारिक रूपांतरण
– नीरू देवी/डॉ. दुर्गेश कुमार राय 13

6. **शोध-पत्र :** बुद्ध शरण हंस के कहानी-साहित्य में आंबेडकरवादी चेतना : एक आलोचनात्मक अध्ययन
– देवचंद्र भारती 'प्रखर' 16

7. **शोध-पत्र :** दामोदर मोरे की आंबेडकरवादी कविता में नीले शब्दों की क्रान्ति
– डॉ. रमेश कुमार 30

8. **शोध-पत्र :** भारत-कनाडा संबंधों का समकालीन संकट : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
– डॉ. सुशील कुमार यादव 34

9. **समकालीन हस्तक्षेप :** नाम ज़्यादा, समझ कम : संविधान, समाज और हमारा समय
– डॉ. बी.आर. बुद्धप्रिय 38

10. **कविता :** रघुबीर सिंह 'नाहर' की कुंडलियाँ 39

11. **कहानी :** चमड़ा बाजार – श्याम लाल राही 40

12. **पुस्तक समीक्षा :** गुरु रविदास पचासा – एक समतामूलक काव्य-दृष्टि का सशक्त हस्तक्षेप 42

13. **रिपोर्ट :** गुरु रविदास पचासा का विमोचन संपन्न 43

पत्रिका के बारे में : यह पत्रिका वर्ष 2021 से, हिंदी भाषा तथा साहित्य विषय में प्रकाशित होती है।

पत्रिका का उद्देश्य है-साहित्य के माध्यम से मानवता, सामाजिकता, राष्ट्रीयता और वैज्ञानिकता का प्रचार-प्रसार करना।

आंबेडकरवादी साहित्य : प्रतिरोध नहीं, पुनर्रचना का अनुशासन

समय का सबसे बड़ा संकट यह है कि विचार की जगह प्रतीक ने ले ली है। डॉ. आंबेडकर का नाम सर्वत्र उच्चारित हो रहा है, परंतु उनका दर्शन उसी अनुपात में अनुपस्थित है। चित्रों और नारों की बहुलता ने अध्ययन और चिंतन की गंभीरता को प्रतिस्थापित कर दिया है। भीमराव रामजी आंबेडकर ने जिस सामाजिक क्रांति की परिकल्पना की, वह भावनात्मक उत्तेजना पर आधारित नहीं थी। वह विश्लेषण पर आधारित थी। जाति का उच्छेद एक नैतिक घोषणा नहीं, एक तार्किक अनिवार्यता था। संविधान केवल विधिक दस्तावेज नहीं, सामाजिक पुनर्रचना की रूपरेखा था। धम्म–दीक्षा केवल धार्मिक परिवर्तन नहीं, नैतिक और बौद्धिक पुनर्संयोजन था।

आंबेडकरवादी साहित्य उसी पुनर्संयोजन का साहित्यिक रूप है। स्पष्ट घोषणा आवश्यक है–

- आंबेडकरवादी साहित्य करुणा–प्रधान भावुक लेखन नहीं है।
- यह आक्रोश की असंयमित भाषा भी नहीं है।
- यह पहचान–आधारित उत्सवधर्मिता नहीं है।
- यह पौराणिक प्रतिशोध की परियोजना नहीं है।

यह सामाजिक संरचना का तर्कपूर्ण विश्लेषण और उसके परिवर्तन का वैचारिक अनुशासन है।

आंबेडकर का अंतिम बौद्धिक संकल्प गौतम बुद्ध के धम्म में निहित था। यह धम्म आस्था से अधिक प्रज्ञा का आग्रह करता है। यह करुणा को नैतिकता से जोड़ता है और समता को सामाजिक व्यवहार में परिणत करता है। आंबेडकरवादी साहित्य इसी प्रज्ञा, इसी नैतिकता और इसी समता को अपनी आधारभूमि बनाता है। आज साहित्य के सामने दो रास्ते हैं पहला, प्रतीकों की भीड़ में शामिल होकर आत्मसंतोष प्राप्त करना। दूसरा, विचार की कठिन राह स्वीकार करना। आंबेडकरवादी साहित्य दूसरा मार्ग चुनता है।

इस अंक का उद्देश्य विमर्श को दिशा देना है। यहाँ सैद्धांतिक प्रतिमान की स्थापना का आग्रह है। यहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि आंबेडकरवादी साहित्य का मूल्यांकन किन मानदंडों पर होगा तर्कवाद, संवैधानिक नैतिकता, जाति–निरसन दृष्टि, सामाजिक पुनर्रचना और बौद्ध–मानवतावाद। जब तक साहित्य स्वयं अपने मानक निर्धारित नहीं करता, तब तक वह या तो राजनीतिक उपभोग का साधन बनता है या भावनात्मक आवेग का माध्यम। आंबेडकरवादी साहित्य इन दोनों स्थितियों को अस्वीकार करता है।

- यह साहित्य विरोध का शोर नहीं; परिवर्तन की संरचना है।
- यह साहित्य स्मृति का संग्रह नहीं; भविष्य की रूपरेखा है।
- यह साहित्य प्रतीक की सजावट नहीं; विचार का अनुशासन है।

वर्तमान में, यह स्पष्ट कहना आवश्यक है आंबेडकरवादी साहित्य भारतीय साहित्य की परिधि पर नहीं, उसकी नैतिक धुरी पर स्थित है।

– देवचंद्र भारती 'प्रखर'

आंबेडकरवादी साहित्य : अवधारणा, सीमा और प्रतिमान

- देवचंद्र भारती 'प्रखर'

प्रस्तावना

समकालीन हिंदी साहित्य में 'आंबेडकरवादी साहित्य' एक प्रचलित पद बन चुका है, किंतु प्रचलन और सिद्धांत समान नहीं होते। किसी भी साहित्यिक धारा की स्थिरता उसके नाम में नहीं, उसकी वैचारिक स्पष्टता में होती है। यदि अवधारणा अस्पष्ट रहे, तो विमर्श भावनात्मक प्रतिक्रियाओं और आंशिक व्याख्याओं में बिखर जाता है।

आंबेडकरवादी साहित्य को लेकर सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसे कभी अनुभव-आधारित लेखन तक सीमित कर दिया जाता है, कभी इसे केवल जातीय अस्मिता के उत्सव में बदल दिया जाता है, और कभी इसे राजनीतिक समर्थन या विरोध के साधन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

यह लेख स्पष्ट घोषणा करता है कि आंबेडकरवादी साहित्य न तो केवल अनुभव का लेखन है, न नारा है, न अस्मिता-आधारित भावुकता। यह सामाजिक पुनर्रचना की एक संगठित बौद्धिक परियोजना का साहित्यिक रूप है।

1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और वैचारिक स्रोत

आंबेडकरवादी साहित्य की वैचारिक जड़ें सीधे डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर के चिंतन में स्थित हैं। डॉ० आंबेडकर का कार्य तीन स्तरों पर समझा जा सकता है-

(i) जाति-व्यवस्था का संरचनात्मक विश्लेषण

(ii) संवैधानिक लोकतंत्र की स्थापना

(iii) बौद्ध-मानवतावादी नैतिकता की ओर उन्मुखता

जाति का उच्छेद केवल एक भाषण नहीं, सामाजिक दर्शन का पाठ है। उसमें परंपरा की तार्किक समीक्षा है। संविधान निर्माण केवल विधिक प्रक्रिया नहीं, नैतिक ढाँचे का निर्माण था। आंबेडकर का अंतिम वैचारिक संकल्प बौद्ध धम्म की ओर था, जिसका मूल आधार प्रज्ञा, करुणा और समता है। यहाँ स्पष्ट रूप से गौतम बुद्ध का प्रभाव दिखाई देता है। इस प्रकार आंबेडकरवादी साहित्य की आधारभूमि तीन तत्वों से निर्मित होती है तर्क, संविधान और धम्म।

2. अवधारणा : निर्णायक परिभाषा

आंबेडकरवादी साहित्य, वह साहित्य है-

(अ) जो जाति-आधारित सामाजिक संरचना का विश्लेषण करता है,

(ब) जो समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व को मूल मूल्य मानता है,

(स) जो संवैधानिक नैतिकता को सामाजिक दिशा के रूप में स्वीकार करता है,

(द) और जो सामाजिक पुनर्रचना की चेतना को रचनात्मक रूप में व्यक्त करता है।

यह साहित्य अनुभव का विस्तार नहीं, अनुभव का विश्लेषण है। यह करुणा का वर्णन नहीं, करुणा की संरचना की खोज है। यह विरोध का शोर नहीं, परिवर्तन का तर्क है।

3. सीमा : स्पष्ट अस्वीकृतियाँ

किसी भी सिद्धांत की स्थापना उसके निषेध से भी होती है। आंबेडकरवादी साहित्य-

1. केवल आत्मकथात्मक पीड़ा नहीं है।
2. केवल जातीय गौरव का उत्सव नहीं है।
3. केवल राजनीतिक प्रतिक्रियात्मकता नहीं है।
4. केवल क्रोध-प्रधान भाषा नहीं है।

यदि कोई रचना जाति का उल्लेख तो करती है, पर उसके संरचनात्मक विश्लेषण से बचती है, तो वह आंबेडकरवादी नहीं है। यदि कोई लेखन समानता की बात तो

करता है, पर संवैधानिक नैतिकता को अस्वीकार करता है, तो वह आंबेडकरवादी नहीं है।

4. तुलनात्मक विवेचन

(क) अनुभववादी लेखन से भिन्नता

अनुभववादी साहित्य निजी जीवन की पीड़ा का वर्णन करता है। आंबेडकरवादी साहित्य उस पीड़ा की सामाजिक संरचना का विश्लेषण करता है।

(ख) पहचान–आधारित लेखन से भिन्नता

पहचान–आधारित साहित्य अस्मिता की पुष्टि करता है। आंबेडकरवादी साहित्य असमानता की संरचना को समाप्त करने की दिशा देता है।

(ग) वर्ग–आधारित साहित्य से भिन्नता

वर्ग–संघर्ष आर्थिक विश्लेषण तक सीमित हो सकता है। आंबेडकरवादी दृष्टि जाति, संस्कृति और नैतिक संरचना को भी विश्लेषण का हिस्सा बनाती है।

5. प्रतिमान : औपचारिक मानदंड

आंबेडकरवादी साहित्य के निम्नलिखित प्रतिमान स्थापित किये जाते हैं–

(i) जाति–निरसन दृष्टि

(ii) तार्किक और प्रमाण–आधारित प्रस्तुति

(iii) संवैधानिक मूल्य–निष्ठा

(iv) मानव–गरिमा की केंद्रीयता

(v) सामाजिक पुनर्रचना का संकेत

(vi) ऐतिहासिक चेतना

(vii) भाषिक स्पष्टता

(viii) नैतिक अनुशासन

(ix) बौद्ध–मानवतावादी दृष्टि

(x) विचार की प्राथमिकता, प्रतीक से ऊपर

इन प्रतिमानों के बिना कोई रचना आंबेडकरवादी कहलाने की पात्र नहीं।

6. आलोचना–पद्धति की स्थापना

आंबेडकरवादी साहित्य की अपनी आलोचना–पद्धति होगी, जो–

(क) सामाजिक संरचना का विश्लेषण करेगी,

(ख) तर्क और प्रमाण को प्राथमिकता देगी,

(ग) संवैधानिक मूल्यों को मानक मानेगी,

(घ) और नैतिक उत्तरदायित्व को मूल्यांकन का आधार बनाएगी।

यह आलोचना भावनात्मक प्रशंसा या निंदा पर आधारित नहीं होगी।

निष्कर्ष : सिद्धांत की उद्घोषणा

आंबेडकरवादी साहित्य किसी आंदोलन का विस्तार मात्र नहीं है। यह साहित्यिक अनुशासन है। यह धारा अनुभव से शुरू होकर विश्लेषण तक पहुँचती है और पुनर्रचना पर समाप्त होती है। आंबेडकरवादी साहित्य की पहचान भावुकता नहीं, वैचारिक स्पष्टता है। उसकी शक्ति नारे में नहीं, तर्क में है। उसका लक्ष्य विरोध नहीं, सामाजिक पुनर्रचना है।

यह लेख घोषित करता है कि आंबेडकरवादी साहित्य एक स्वतंत्र सैद्धांतिक धारा है, जिसके स्पष्ट प्रतिमान, सीमा और आलोचना–पद्धति हैं।

संदर्भ

1. भीमराव रामजी आंबेडकर, जाति का उच्छेद, आंबेडकर प्रतिष्ठान नई दिल्ली,
2. राज्य और अल्पसंख्यक, आंबेडकर प्रतिष्ठान नई दिल्ली,
3. संविधान सभा भाषण, 25 नवम्बर 1949
4. भारत सरकार, भारत का संविधान (1 मई 2024 को यथावर्तमान)
5. गौतम बुद्ध, धम्मपद

आंबेडकरवादी चेतना का काव्यात्मक रूप : दामोदर मोरे का अध्ययन

- डॉ० तात्याराव सूर्यवंशी

शोध सारांश -

प्रस्तुत आलेख में दामोदर मोरे की कविताओं में निहित आंबेडकरवादी दृष्टि का विश्लेषण किया गया है। मोरे की काव्य-दृष्टि सामाजिक यथार्थ से सीधे टकराती है और जाति, वर्ण, मनुवाद, धार्मिक पाखंड तथा सांस्कृतिक वर्चस्ववाद के विरुद्ध वैचारिक प्रतिरोध का स्वर प्रस्तुत करती है। उनकी कविताएँ केवल करुणा या पीड़ा का वर्णन नहीं करतीं, बल्कि परिवर्तन की सक्रिय चेतना को जगाती हैं।

कवि ने सामाजिक विषमता, अस्पृश्यता, श्रम-अपमान, शब्दों की अर्थहीनता, संवैधानिक मूल्यों के अवमूल्यन तथा आज़ादी के अधूरे स्वप्न जैसे प्रश्नों को अपने काव्य का केंद्र बनाया है। उनकी रचनाओं में डॉ. भीमराव आंबेडकर की समतामूलक विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होता है। मोरे के यहाँ 'अंबेडकर' केवल एक व्यक्तित्व नहीं, बल्कि बंजर भूमि की धड़कन, सदियों के दर्द की रोशनी और मनुवाद-विरोधी अग्नि के रूप में उभरता है।

कवि सामाजिक संरचना के मिथ्या आदर्शों को विखंडित करते हुए शब्द, धर्म, इतिहास और सत्ता के गठजोड़ को बेनकाब करता है। वह दलित अनुभव को करुण आख्यान तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे आंबेडकरवादी वैचारिक क्रांति में रूपांतरित करता है। इस प्रकार मोरे की कविता संघर्ष, आत्मसम्मान, समता और मानव-मुक्ति की वैचारिक परियोजना का काव्यात्मक रूप है।

बीज शब्द

आंबेडकरवाद, दामोदर मोरे, समता, मनुवाद-विरोध, सामाजिक न्याय, जाति-विमर्श, बहुजन चेतना, प्रतिरोध-काव्य, संवैधानिक मूल्य, मानव-मुक्ति।

मूल लेख

दामोदर मोरे की कविताओं में विवेचित आंबेडकरवादी संवेदना से मराठी, अंग्रेजी और हिन्दी साहित्य को मजबूती मिली है। बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर के विचारों, आंदोलनों से प्रभावित दामोदर मोरे क्रांति और परिवर्तन के पक्षधर रहे हैं। भारत में आज भी बहुजन समाज, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी के चलते आर्थिक दृष्टि से कमजोर पड़ रहा है। दूसरी तरफ सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में असमानताएं, शोषण, भ्रष्टाचार से लिप्त व्यवस्था मूल्यहीन की दिशा में बढ़ रही है। इन समस्याओं को अपनी चिंता का विषय बनाते हुए अपने समकाल को आंबेडकरवादी संवेदना से रूबरू कराते हैं। दामोदर मोरे सन 1972 से अपने लेखन द्वारा, साहित्यिक मंचों से आंबेडकरवादी विचार स्थापित करने के लिए प्रयासरत रहे हैं। 'नीले शब्दों की छाया में' काव्य संकलन के प्रस्तावना में लिखा है- सामाजिक उत्पीड़न, वेदना एवं आंदोलन की संवेदना को नजरअंदाज करने वाले भगोड़े और स्वार्थी रचनाकार को मैं कवि नहीं मानता, मैं तो उस आंबेडकरवादी कविता को चाहता हूँ जिसमें संघर्ष का संगीत हो, जिसमें स्वतंत्रता की रणभेरी बजती हो, समता का गगन भेदी जयघोष सुनाई देता हो, जिसमें भ्रातृत्व का भाव बहता हो, जो सांप्रदायिक दाहकता को ठंडा करता हो, आदमी को आदमी बनाने का सबक सिखाता हो, आंबेडकरवादी साहित्यकार समय का प्रहरी होता है। यह सर्वविदित है कि समय के सबसे अधिक सबसे तेज और निर्मम थपेड़े उस तबके को लगते हैं जो राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में सबसे अधिक अनावश्यक और उपेक्षित हैं। अतः यह बेहद जरूरी हो जाता है कि डॉ. आंबेडकर ने भारत के बहुजन समाज को संवैधानिक आधार पर समानता, एकता तो दिलाई परंतु सामाजिक स्तर पर आज भी मनुवाद के चलते आजादी के 67 वर्ष बाद भी समाज ज्यों का त्यों मनुवाद पर चल रहा है। समय आ गया है। दलितों में से दलितत्व निकालकर पाक मन से आंबेडकरी विचार अपनाकर

हम उस हीन रहने वाले पद को त्याग दें। अब मैं साहित्य में बौद्ध की ध्वजा फहरा रहा हूँ क्योंकि अब मैं दलित नहीं बौद्ध हूँ। दलित के लिए मेरे मन में प्रेम है, मगर दलितत्व से मैं नफरत करता हूँ। दलितत्व से ऊपर उठाकर उनको मनुष्यत्व के पद पर ससम्मान प्रतिष्ठित करना मेरा उद्देश्य है।(1)

पिछले दो दशकों से हिन्दी दलित साहित्य में वैचारिक परिवर्तन देखने में आया है। जो सार्थक वैज्ञानिक आधार पर आधारित है। इसकी जड़ें आंबेडकरवादी विचार धारा में समाहित हैं। हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य की जगह आंबेडकरवादी साहित्य की स्थापना का श्रेय डॉ. सिंह को जाता है। वे समझते हैं कि दलित साहित्य के नामकरण को जाति की परिधि में बांधा हुआ है। जिस जाति व्यवस्था को तोड़ने के लिए गौतम बुद्ध से लेकर कबीर, रैदास, फुले और डॉ. आंबेडकर आदि ने ताउम्र संघर्ष किया। उसे बदलने के लिए वैज्ञानिक, ऐतिहासिक पद्धति को अपनाया, परंतु हिन्दी दलित साहित्यकारों ने डॉ. आंबेडकर के जातिविहीन समतामूलक समाज बनाने के सपने को जातिवादी समाज का साहित्य निर्माण करने में लगा हुए है।

आंबेडकरवादी साहित्य की अवधारणा को विस्तार देते हुए डॉ. तेज सिंह जी ने चर्चा को दिशा दी है। हिन्दी के तथाकथित दलित साहित्यकारों ने डॉ. आंबेडकर के विचारों को सतही तौर पर अपनाया है, लेकिन उन्हें एक निश्चित धारणा के तहत विचारधारा में नहीं बदला। यही वजह है कि उनमें डॉ. आंबेडकर के जाति संबंधी विचार तो मिल जाते हैं लेकिन आंबेडकरवादी संचेतना के दर्शन नहीं होते और न ही आंबेडकरवादी विचारधारा दिखाई देती है। इसलिए डॉ. तेज सिंह दलित-साहित्य की जगह आंबेडकरवादी साहित्य नामकरण को तरजीह देते हैं। उन्हीं के शब्दों में यही वजह है कि दलित साहित्य के जातिवादी स्वरूप को देखते हुए मैंने पहली बार उसके स्थान पर आंबेडकरवादी साहित्य की अवधारणा प्रस्तुत की है।

पिछले दशक में विद्वानों, रचनाकारों की चेतना सामाजिक, राजनीतिक प्रतिक्रिया के संबंध में तीव्र होती चली है। साहित्यकार, बुद्धिजीवी डॉ. आंबेडकर के वैचारिक अवधारणा को तीव्र बनाने के लिए दलित साहित्य, दलित-विचार, दलित-लेखन के बदले, सर्वप्रथम मराठी साहित्य में आंबेडकरवादी साहित्य, आंबेडकरवादी विचार, आंबेडकरवादी आंदोलन, फुले-आंबेडकर सम्मेलन, क्रांतिकारी सम्मेलन, आदि नामों से अभिहित करना पसंद कर रहे हैं। क्योंकि आंबेडकर के विचार बुद्धिवादी और तार्किक जीवन-दर्शन पर आधारित है। यह आंबेडकरवाद समग्र विश्व मानव जीवन को अपने बाहों में लेने वाले दर्शन और लोकतंत्र को माननेवाला है।

गौरतलब है कि हिन्दी और मराठी में दलित और गैरदलित जैसे विचार धाराएं जुड़ गई हैं और कालांतर में राजनीतिक चपेट में आकर आंबेडकर विचार विकृत हुए हैं। आंबेडकरवाद को स्पष्ट करते हुए डॉ. यशवंत मनोहर लिखते हैं- ''आंबेडकरवादी और दलित आंदोलन में अंतर यह है कि, दलित हमें उच्च जाति के लोगों ने बनाया, हमें नीच रखने के लिए अगर हमें नीच नहीं रहना है तो हमें नीच रखने वाला शब्द ही त्यागना होगा। हमारा वर्णन क्रांतिकारी दर्शन से किया जाना चाहिए। आंबेडकरवाद क्रांतिकारी दर्शन है, इसलिए हमने अपने साहित्य को आंबेडकरवादी कहा।''(2)

बहुभाषी कवि दामोदर मोरे घोषित आंबेडकरवादी रचनाकार हैं और वे दलित-रचनाकार के बजाय आंबेडकरवादी रचनाकार घोषित करते हैं। आपके अधुनातन रचनाओं में दामोदर मोरे के विचारों के रेशे-रेशे में आंबेडकरवाद उमड़ा है। वर्तमान में हिन्दी-मराठी और अंग्रेजी साहित्य में आंबेडकरवादी विचारधारा को मजबूत किया है। बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर अक्सर कहा करते थे कि-इंजजसम जव उम पे उंजजमत वि रवल - दामोदर मोरे ने इस विचार को आगे बढ़ाते हुए लिखा है कि- Battle is beauty, battle is our duty- एक जुझारू सिपाही की तरह लड़ते रहने का आह्वान करते हुए वे लिखते हैं-

मैं झुलस रहा हूँ
अपने आप में
जल रहा हूँ
गर तुम्हें ठंड लगती हो
तो आओ मेरे पास
लो मुझ से ऊर्जा
लेकिन
रोना दु:ख से लड़ने का
कोई हथियार नहीं।(3)

आज भूमंडलीकरण का दौर है। हर चीज नई, हर विचार क्या हो रहा है। परंतु परंपरा का चोला पहने वर्णवादी

व्यवस्था, जाति, अपना चोला जरूर बदल रही है, परंतु वर्णवादी व्यवस्था जस की तस बरकरार है। मराठी के प्रख्यात रचनाकार बाबुराव बागुल ने इस व्यवस्था के पोषक की ओर इशारा करते हुए लिखा है-

देवताओं, मंदिरों, ग्रहणियों का यह देश इसलिए क्या यह सब कुछ

अमर है- वर्ण अमर, जाति अमर, अस्पृश्यता अमर। युग के बाद, युग आए, बड़े-बड़े चक्रवर्ती आए, दार्शनिक आए फिर भी विषमता अमर है इससे

एक ही अर्थ निकलता है कि यह व्यवस्था बुद्धिजीवियों, संतों और राज

करने वालों को मंजूर थी। यानी इस व्यवस्था को बनाने और उसे बनाए

रखने में बुद्धिजीवियों और शासकों का हाथ है।

आजादी आई
स्वतंत्र की सुबह हुई
अंग्रेज गए..
खुशी की बौछार आयी।
मैंने गौर से अपनी गलियों में देखा
छाया हुआ था सब तरफ
आजादी का घना अंधेरा।(4)

दलित साहित्य और आंबेडकरवादी साहित्य में यही बुनियादी फर्क है कि दलित साहित्य से जो भाव निकल रहा है, उसमें वह लड़ाकूपन की कमी लग रही है। आंबेडकरवादी साहित्यकार समस्याओं से रूबरू होकर क्रांति चाहता है। दामोदर मोरे आंबेडकरवादी विचारों की मशाल लेकर बहुजन समाज का अंधेरा दूर करने के लिए निकल पड़े-

समंदर तू चिल्ला मत, मत कर शोर।
मैं धीरे-धीरे बढ़ रहा हूँ पूर्व की ओर।(5)

आंबेडकरवादी विचारों को कवि ने काव्य में ही व्याख्यायित किया है यथा-

बंजर और बेजान जमीन की
धड़कन का नाम है अंबेडकर
तीन-सदियों के दर्द की
रोशनी का नाम है अंबेडकर
मनुवाद को जलाने वाली
आग का नाम है अंबेडकर।(6)

मनुष्य होते हुए भी दलितों का एक तबका आज भी सदियों पुराना मैला सफाई का धंधा करने पर मजबूर है। वर्णाश्रम के चलते उनके खून में हीन मानसिकता घर कर गई है। इस मानसिकता को कौन दूर करेगा, इसके जिम्मेदार कौन हैं। इतना ही नहीं उन्हें अस्पृश्य के नाम पर कलंकित किया गया। जबकि सवर्ण महिला-पुरुष भी अपने बच्चों का मैला साफ करते हैं पर वे कलंकित नहीं हैं। इस भेद को कवि ने बखूबी स्पष्ट किया है यथा-

सवर्ण हो या अवर्ण महिला वेद हो या मनुस्मृति
शास्त्र हो या पुराण
किसी ने भी उसे
छूने से नहीं किया मना
हमें ही क्यों 'अछूत' कहा
किसकी दिमागी उपज से निकला
अस्पृश्यता का यह मैला।(7)

आंबेडकरवादी रचनाकार में संकीर्ण मानसिकता की कोई गुंजाइश नहीं होती है। वह सार्वभौम होता है। उसकी मानसिकता निष्कलंक, निष्कपट होती है। वह संसार को समता के आधार पर नापता है। वह हमेशा मनुष्य में विकास का हिमायती होता है। परंतु हमारे समाज में जाति का वह जहर इस भूमंडलीकरण के दौर में भी अपना फन बनाए रखा है। कवि व्याकुल है और इस जहर को दूर करने के लिए स्वयं बलिदान देने के लिए तैयार हो जाता है-

यह जातिवाद का जहरीला पानी
मैं
कब तक बहने दूँ
या
मैं ही बाँध बनकर
अपने आप को दफना दूँ।(8)

यह सर्वविदित है कि मनुष्य की चेतना उसके अस्तित्व को जन्म नहीं देती बल्कि उसका सामाजिक अस्तित्व उसकी चेतना का निर्धारण करता है। क्योंकि सामाजिक अस्तित्व के कारण ही चेतना जागृत होती है। इसी ज्ञान से व्यक्ति भारतीय

समाज में व्याप्त विषमता, शोषण, अन्याय आदि कुरीतिपूर्ण विचारों को पहचान पाता है जो हिन्दुत्ववादी मानसिकता के छद्म कसौटियों यथा सत्य, शिव, सुंदर के आवरण में पनप रही है। कवि दामोदर मोरे इस षड्यंत्र से भली भांति परिचित है। इतना ही नहीं उनकी कविताएं सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि विसंगतियों पर प्रकाश डालती है। इस संदर्भ में डॉ. संताराम देशमुख की उक्ति बेहद सही लगती है कि- ''दामोदर मोरे न केवल मराठी भाषा और महाराष्ट्र के ही श्रेष्ठ कवि व लेखक हैं, अपितु हिन्दी भाषा और हिन्दी प्रदेश के आंबेडकरवादी साहित्य, सांस्कृतिक संवेदना से संपन्न राष्ट्र के हैं'' मोरे का यह प्रभाव इतना स्थायी और सर्वकालीन महत्व का है कि हमारी अगली पीढ़ियां भी उनके कृतित्व से निरंतर गौरवान्वित होती रहेंगी।''(9)

देश स्वतंत्र होकर 67 वर्ष हुए, आज भी बहुजन की स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। बजाय इसके जाति, धर्म की विषम मानसिकता गहरी ही हो गई है। ब्राह्मणों ने धार्मिक कृत्य के आधार पर शब्दों के अर्थ अपनी स्वार्थपूर्ति के अनुरूप सदियों पहले ढाल लिये थे वही आज भी चल रहा है, जिसके चलते बहुजन समाज का शोषण जारी है। कवि इस शब्दजाल के प्रति सचेत करते हुए लिखता है-

शब्दों,
कहाँ खो आए हो तुम अपना स्वरूप
कहाँ गिरवी रखे है तुमने अपने मानवतावादी अर्थ
क्यों करते हो तम वाचाल वीरों की भाटगिरी
लब्बरों की भंडागिरी।(10)

इक्कीसवीं सदी आधुनिक भारत के राष्ट्रपिता बाबा साहब डॉ. आंबेडकर का युग है। वे जीवन भर जातिभेद को दूर करने के लिए लड़ते रहे और बौद्ध धर्म में विजयी हुए। हैरानी यह है कि आज भी यह जातिभेद, वर्णभेद, शब्दों के आवरण बदलते हैं, रंग बदलते हैं, विषम समस्या जस की तस है। आज भी बहुजन दलित मानव अधिकार से वंचित किया जा रहा है, किसी प्रकार की सरकारी सुविधा उन्हें नसीब नहीं हुई है। संवैधानिक मूलभूत हक जो न्याय पर आधारित है उसका अर्थ किसी शासक को समझ नहीं आ रहा है। सचमुच यह देश पत्थरों का हो गया है। कवि मोरे ने लिखा है-

अन्याय हो जहाँ भी पिड़ उटेंगे
हम शब्द ही रह गये यह सिर्फ अर्थहीन शब्द।
रस निकाल कर फेंके हुए कोई की तरह
एक भी नहीं उगा, ना खौल उठा
किसी के प्रसरणशील खून में
क्योंकि अन्याय करने वाले भी
वही थे
जिन्होंने गले लगाया था पत्थर,
भगवान समझकर।
वही आज भी, पत्थर की कलाकृति पर
सिंदूर लगाते हुए
अंधविश्वास का सिंदूर कठिन बनता जा रहा है।
पत्थर की तरह
हाँ, तो यह देश
पत्थरों का ही है।(11)

इतिहासकारों ने, पुराणपंथियों ने, धर्मरचनाकारों ने मूल निवासी बहुजन दलित समाज को प्रताड़ित अवस्था में जीने के लिए मजबूर किया। उनके मूलभूत हक छीन कर गुलामों जैसी अवस्था पैदा की। अंग्रेज भारत में आकर सवर्ण को गुलाम बनाया, और बहुजन सवर्ण के गुलाम, यानी दलित बहुजन गुलामों के गुलाम, यह स्थिति आज भी नहीं बदली है। इसलिए कवि दामोदर मोरे ताकीद करते हुए आंबेडकरवादी संवेदना के प्रकाश में मंजिल को पाने को लिये अनवरत आगे बढ़ने का आवाहन करते हैं-

बहुत चलना है अभी भी
बनाने हैं रास्ते और मोड़
उजाले की उँगलियाँ पकड़ कर
तुम आगे-आगे बढ़ो
तुम्हारी राह रोकने की,
क्या हिम्मत है
इस अँधियारे में।(12)

निष्कर्ष

दामोदर मोरे की कविताएँ आंबेडकरवादी दृष्टि की सशक्त काव्यात्मक अभिव्यक्ति हैं। उनकी रचनाओं में सामाजिक यथार्थ का निर्भीक उद्घाटन, जाति-वर्ण व्यवस्था की तीखी आलोचना तथा मनुवादी संरचनाओं के विरुद्ध स्पष्ट वैचारिक

प्रतिरोध दिखाई देता है। मोरे की कविता केवल पीड़ा का संवेदनात्मक चित्रण नहीं करती, बल्कि वह परिवर्तन की चेतना को सक्रिय करती है और संघर्ष को अनिवार्य ऐतिहासिक दायित्व के रूप में प्रस्तुत करती है।

उनकी काव्य–दृष्टि में 'अंबेडकर' एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व से आगे बढ़कर समता, स्वाभिमान और सामाजिक न्याय का जीवंत प्रतीक बन जाता है। कवि शब्दों की अर्थहीनता, धार्मिक पाखंड, इतिहास–निर्मित मिथकों और सत्ता–समर्थित अन्याय को प्रश्नांकित करता है। इस प्रकार उसकी कविता सामाजिक चेतना का पुनर्निर्माण करती है।

स्पष्ट है कि दामोदर मोरे का काव्य आंबेडकरवादी विचारधारा को केवल वैचारिक स्तर पर नहीं, बल्कि रचनात्मक और क्रांतिकारी स्तर पर प्रतिष्ठित करता है। उनकी कविताएँ बहुजन समाज की आकांक्षाओं, संघर्षों और मुक्ति की दिशा को स्पष्ट करती हैं। अत: मोरे की काव्य–संवेदना हिंदी साहित्य में आंबेडकरवादी चिंतन की सुदृढ़ और सक्रिय उपस्थिति का प्रमाण है, जो समता–आधारित समाज–निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देती है।

संदर्भ :

1. मोरे, दामोदर, नीले शब्दों की छाया में, पृ. 4
2. कथादेश, मार्च–2008, पृ. 58
3. मोरे, दामोदर, पलकें सुलग रही है, पृ. 40
4. मोरे, दामोदर, नीले शब्दों की छाया में, पृ. 34
5. वही, पृ. 38
6. वही, पृ. 39
7. वही, पृ. 46
8. मोरे, दामोदर, सदियों के बहते जख्म, पृ. 103
9. पाठक, विनय कुमार, सिंह, इंद्र बहादुर सिंह, आंबेडकरवादी सौंदर्यशास्त्रीय यथार्थवाद और दामोदर मोरे की रचनाधर्मिता, नीरज बुक सेंटर, दिल्ली, पृ. 113
10. वही, पृ. 18
11. मोरे, दामोदर, पलकें सुलग रही है, पृ. 38
12. वही, पृ. 56

श्यामलाल राही की ग़ज़लों में प्रतिरोध, राजनीतिक विडंबना और आंबेडकरवादी चेतना का स्वर

- डॉ. दुर्गेश कुमार राय
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, के.जी.के. (पी०जी०) कॉलेज, मुरादाबाद

शोध सारांश -

समकालीन हिंदी ग़ज़ल में श्यामलाल राही का काव्य-संसार प्रतिरोध, राजनीतिक चेतना, धार्मिक प्रतीक-विमर्श और आंबेडकरवादी अस्मिता का संगठित स्वर प्रस्तुत करता है। राही की ग़ज़लें पारंपरिक रूमानियत से हटकर सामाजिक यथार्थ के तीखे प्रश्न उठाती हैं। उनमें व्यवस्था-आलोचना, सत्ता की विडंबना, सांस्कृतिक प्रदूषण, ऐतिहासिक स्मृति तथा बौद्ध वैचारिकता के सूत्र अंतर्निहित हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में राही के तीन काव्य-संग्रहों मजमुआ-ए-ग़ज़ल (2021), राग-अनुराग (2024) तथा दरिया के साथ-साथ (2024) के चयनित शेरों के आधार पर उनकी काव्य-दृष्टि का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि राही की ग़ज़ल समकालीन आंबेडकरवादी काव्य-चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति है।

कुंजी-शब्द : ग़ज़ल, प्रतिरोध, राजनीतिक चेतना, आंबेडकरवादी साहित्य, बौद्ध सांस्कृतिक स्मृति, समकालीन हिंदी कविता

1. भूमिका : अनुभव से विचार तक

श्यामलाल राही का यह कथन-''ग़ज़ल और उपन्यास मेरे दिल के बहुत करीब हैं। मैं ग़ज़ल लिखता नहीं, ग़ज़ल जीता हूँ।''1 उनकी रचनात्मक प्रतिबद्धता का उद्घोष है। यहाँ 'जीना' शब्द रचना और जीवन के बीच की दूरी को समाप्त कर देता है। राही की ग़ज़लें अनुभव-सत्य से उपजती हैं; वे शिल्प के सौंदर्य से अधिक यथार्थ की प्रखरता को महत्व देती हैं।

समकालीन ग़ज़ल ने दुष्यंत कुमार के बाद सामाजिक-राजनीतिक चेतना को प्रमुख स्वर दिया। उसी परंपरा में राही का लेखन व्यवस्था की अंतर्विरोधी संरचनाओं को उद्घाटित करता है। उनकी ग़ज़लों में करुणा, आक्रोश और वैचारिक स्पष्टता का त्रिकोण निर्मित होता है।

2. शोषण की संरचना और सत्ता का परिवर्तित चेहरा

राही की दृष्टि सत्ता-परिवर्तन के भ्रम को भंग करती है। वे लिखते हैं-

''आज तक लुटता रहा एहसास पर न हो सका,
लूटने लुटे हुए को आया है रहजन नया।''2

यहाँ 'रहजन नया' प्रतीक है उस व्यवस्था का, जो चेहरे बदलती है, चरित्र नहीं। शोषण की प्रक्रिया निरंतर है; केवल उसके उपकरण बदलते हैं।

इसी संदर्भ में एक और शेर देखें-

''दोस्ती दुश्मन से कर ली अब फिकर की बात क्या,
सारे पहरेदार खुश हो सो रहे हैं आजकल।''3

यह शेर लोकतांत्रिक संस्थाओं की निष्क्रियता और सत्ता-समझौते का रूपक है। 'पहरेदार' यहाँ न्याय, नैतिकता और जनप्रतिनिधित्व की संस्थाओं का संकेत है।

3. धार्मिक प्रतीक और सांस्कृतिक पुनर्पाठ

राही धार्मिक प्रतीकों को यथास्थिति के समर्थन में नहीं, बल्कि उसके विघटन के लिए प्रयुक्त करते हैं-

''है गंदी नाली की तरह हुआ गंगा का पानी,
हम कैसे मान लें इसे भला पाक ओ पावन।''4

यहाँ गंगा का रूपक पवित्रता की अवधारणा पर प्रश्नचिह्न है। राही की दृष्टि में यदि समाज प्रदूषित है तो उसके प्रतीक भी निर्मल नहीं रह सकते। यह शेर धार्मिक पाखंड की आलोचना करता है।

4. मुक्ति-चेतना और आक्रामक प्रतिरोध

राही की ग़ज़लों में केवल शिकायत नहीं, बल्कि मुक्ति

की आकांक्षा है-

''तमाम उम्र तो रिश्तों में बंध के देख लिया,
जरा-सी देर को आजाद भी हुआ जाए।''5

यह शेर व्यक्ति की अस्तित्वगत स्वतंत्रता का आग्रह है। इसी चेतना का उग्र रूप देखें-

''गुलाम हमको बना आज तक रखा जिसने,
उन्हें गुलाम बना सिर झुका दिया जाए।''6

यहाँ प्रतिरोध निष्क्रिय नहीं, प्रत्याक्रमणकारी है। यह शेर शोषक-संरचना को उलट देने की आकांक्षा व्यक्त करता है।

5. आंबेडकरवादी अस्मिता और ऐतिहासिक संकल्प

राही की काव्य-दृष्टि आंबेडकरवादी ऐतिहासिक चेतना से गहरे जुड़ी है—

''भीम का नाम कभी न मिटने देंगे,
जब तक एक भी महार बाकी है।''7

यह शेर सामूहिक स्मृति का उद्घोष है। 'भीम' केवल एक व्यक्तित्व नहीं, बल्कि न्याय और समानता का विचार है। यहाँ अस्मिता केवल भावनात्मक आग्रह नहीं, बल्कि ऐतिहासिक प्रतिज्ञा है।

6. राजनीतिक पतन और नैतिक संकट

समकालीन राजनीति पर राही का तीखा व्यंग्य देखें-

''आज नेता का मतलब है सिर्फ भ्रष्ट रह गया,
सियासत को इस तरह तो न बदनाम कीजिए।''8

यह शेर लोकतंत्र के नैतिक अवमूल्यन की ओर संकेत करता है। उनका दार्शनिक निष्कर्ष भी गहन है-

''यही तो दुनिया की रिवायत है,
घर को बचाने में ही घर जाता है।''9

यह शेर समकालीन विडंबना का गूढ़ सार है-संरक्षण के नाम पर विनाश।

7. बौद्ध सांस्कृतिक स्मृति और लोक-आधारित चेतना

राही की दृष्टि बौद्ध परंपरा से भी जुड़ती है-

''थे बुद्ध यहीं जन्में और मिले इसी मिट्टी में,
बुद्ध की वाणी मिलेगी गोरखपुर बस्ती में।''10

यहाँ बुद्ध की स्मृति को लोक-भूगोल से जोड़ा गया है। यह शेर सांस्कृतिक पुनर्स्मरण और बौद्ध वैचारिकता के पुनर्स्थापन का संकेत देता है।

8. समग्र मूल्यांकन

श्यामलाल राही की ग़ज़लें समकालीन सामाजिक यथार्थ की वैचारिक अभिव्यक्ति हैं। उनमें व्यवस्था-आलोचना, धार्मिक पुनर्पाठ, राजनीतिक विडंबना, आंबेडकरवादी अस्मिता, बौद्ध सांस्कृतिक स्मृति ये सभी तत्व एक संगठित काव्य-दृष्टि का निर्माण करते हैं। राही की ग़ज़ल भावनात्मक आवेग से अधिक वैचारिक ऊर्जा से संचालित है। इस दृष्टि से उनका लेखन आंबेडकरवादी साहित्यिक चेतना का सशक्त स्तंभ सिद्ध होता है।

निष्कर्ष

श्यामलाल राही की ग़ज़लों में प्रतिरोध केवल विषय नहीं, बल्कि रचना-दृष्टि है। वे व्यवस्था के अंतर्विरोधों को उजागर करते हैं और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा को स्वर देते हैं। उनकी ग़ज़लें समकालीन हिंदी साहित्य में आंबेडकरवादी चेतना की प्रभावशाली अभिव्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

संदर्भ-सूची

1. राही, श्यामलाल, मजमुआ-ए-ग़ज़ल, साहित्य संस्थान, गाजियाबाद, 2021, पृष्ठ 7
2. वही, पृष्ठ 10
3. वही, पृष्ठ 38
4. वही, पृष्ठ 42
5. वही, पृष्ठ 43
6. वही, पृष्ठ 44
7. राही, श्यामलाल, राग-अनुराग, रवीना प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024, पृष्ठ 8
8. वही, पृष्ठ 45
9. राही, श्यामलाल, दरिया के साथ-साथ, रवीना प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024, पृष्ठ 96
10. राही, श्यामलाल, राग-अनुराग, रवीना प्रकाशन, नई दिल्ली, 2024, पृष्ठ 74

इक्कीसवीं सदी की आंबेडकरवादी आत्मकथाओं में अनुभव का वैचारिक रूपांतरण

- नीरू देवी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, महात्मा ज्योतिबा फूले रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, उत्तर प्रदेश
- डॉ. दुर्गेश कुमार राय
असि. प्रोफेसर, हिंदी विभाग, के.जी.के. कॉलेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश

शोध सारांश -

इक्कीसवीं सदी की हिंदी आंबेडकरवादी आत्मकथाएँ अनुभव को केवल स्मृति या पीड़ा के रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं, बल्कि उसे वैचारिक चेतना में रूपांतरित करती हैं। यह शोध-पत्र सुशीला टाकभौरे, बुद्ध शरण हंस, डॉ. तुलसीराम, श्यौराज सिंह बेचौन तथा माता प्रसाद की आत्मकथाओं के आधार पर यह प्रतिपादित करता है कि अनुभव यहाँ निष्क्रिय नहीं, बल्कि सक्रिय वैचारिक प्रक्रिया है। जातिगत बहिष्कार, धार्मिक आडंबर, स्त्री-अनुभव, सामुदायिक अनुशासन और बौद्धिक जागरण इन सभी को आत्मकथाकार विश्लेषण के स्तर पर ले जाकर सामाजिक संरचना की पहचान में बदल देते हैं। इस प्रकार अनुभव का वैचारिक रूपांतरण आंबेडकरवादी आत्मकथा की केंद्रीय विशेषता बनकर उभरता है।

1. प्रस्तावना : अनुभव और वैचारिकता का संबंध

आत्मकथा का मूलाधार अनुभव है। किंतु अनुभव का केवल वर्णन साहित्य को वैचारिक नहीं बनाता। जब अनुभव सामाजिक संरचना की पहचान में बदलता है, तब वह वैचारिक रूप ग्रहण करता है। आंबेडकरवादी आत्मकथाओं में अनुभव का उद्देश्य करुणा उत्पन्न करना नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण करना है। यहाँ अनुभव व्यक्तिगत नहीं रहता; वह सामाजिक सत्ता-संबंधों का उद्घाटन करता है। इसी प्रक्रिया को हम ''अनुभव का वैचारिक रूपांतरण'' कहते हैं।

2. जातिगत बहिष्कार : दैनिक जीवन से संरचनात्मक बोध तक

श्यौराज सिंह बेचैन की आत्मकथा मेरा बचपन मेरे कंधों पर में एक प्रसंग उल्लेखनीय है-''उस दिन से पहले मैंने गांव भर में किसी यादव या बनिए के बर्तन में खाना नहीं खाया था। एक-दो आर्यसमाजियों को छोड़कर यादव किसी भी चमार-भंगी को अपने बर्तन नहीं देते थे। हां, मुसलमान उनके बर्तनों में खा सकते थे और उनके हुक्के की चिलम उतारकर पी सकते थे। यों मुसलमानों में भी कुछ लोग हमारी तरह गरीब और भूमिहीन थे, परंतु वे अछूत नहीं थे।'' (बेचैन 300)

यह उद्धरण केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं है। यहाँ भोजन सामाजिक पदानुक्रम का संकेतक बन जाता है। लेखक इस अनुभव को इस रूप में देखता है कि आर्थिक निर्धनता और जातिगत अस्पृश्यता अलग-अलग संरचनाएँ हैं। मुसलमान गरीब हो सकते हैं, परंतु अछूत नहीं; अर्थात् जाति आर्थिक स्थिति से अलग सत्ता-संबंध रचती है। इस प्रकार अनुभव का रूपांतरण होता है-व्यक्तिगत अपमान सामाजिक संरचना की पहचान।

3. सामाजिक बहिष्कार की आंतरिक व्यवस्था

माता प्रसाद की आत्मकथा झोपड़ी से राजभवन में 'हुक्का-पानी बंद' की परंपरा का उल्लेख मिलता है-''1935 ई के आसपास चमार जाति की हर बस्ती और गांव में इस बिरादरी का अलग-अलग टाट था... यदि किसी ने उसकी बात न मानी, तो वह उसका हुक्का-पानी बंद कर देता था। हुक्का बंद होना एक सामाजिक बहिष्कार था। जिसका हुक्का-पानी बंद होता, उसके यहां खान-पान, विवाह-शादी, मरनी-करनी में या छप्पर उठाई कोई नहीं करता था।'' (प्रसाद 22)

यहाँ अनुभव बाहरी उत्पीड़न का नहीं, बल्कि समुदाय के भीतर अनुशासन-व्यवस्था का है। 'टाट' और 'चौधरी' की व्यवस्था सत्ता-संबंधों का आंतरिक मॉडल प्रस्तुत करती है। लेखक इस व्यवस्था को केवल परंपरा नहीं मानता; वह समझता है कि सामाजिक बहिष्कार नियंत्रण का उपकरण है। यहाँ अनुभव का रूपांतरण घटना सामाजिक दंड-प्रणाली की पहचान।

4. धार्मिक आडंबर और तर्कशील विखंडन

बुद्ध शरण हंस की कृति टुकड़े-टुकड़े आईना (भाग-1) में एक प्रसंग उल्लेखनीय है-''मेरे गांव में एक धनी व्यक्ति का बाप मर गया। श्राद्ध में उसने (पुरोहित को) टी.वी. दान दिया... मैंने अपने पास के लोगों के समक्ष यह टिप्पणी की - श्राद्ध में टी.वी. दान किया, तब एक मोबाइल भी दान कर देना चाहिए था और रोज-रोज उसे अपने बाप से बात कर लेना चाहिए था। यह सुनकर सभी लोग हंसने लगे।'' (हंस 92) यह कथन व्यंग्य है, परंतु इसके भीतर धार्मिक कर्मकांड की तार्किक असंगति को उजागर किया गया है।

5. स्त्री-अनुभव : निजी से राजनीतिक की ओर रूपांतरण

आंबेडकरवादी आत्मकथाओं में स्त्री-अनुभव केवल जातिगत उत्पीड़न तक सीमित नहीं है; वह घरेलू संरचना के भीतर निहित सत्ता-संबंधों को भी उद्घाटित करता है। सुशीला टाकभौरे शिकंजे का दर्द में स्पष्ट लिखती हैं-''दलित पुरुषों द्वारा लिखी आत्मकथाओं के साथ, यदि दलित स्त्री की आत्मकथा को देखा जाएगा, तो वह भी कुछ अलग नजर आएगी। अक्सर स्त्रियों की आत्मकथाओं को अलग दृष्टि से देखा जाता है, क्योंकि उनमें घरेलू और पारिवारिक बातों की भी अहम स्थिति होती है। मैंने 'शिकंजे का दर्द' की पांडुलिपि कुछ लोगों को पढ़ने के लिए दी थी। तब आत्मीय हितैषी लोगों ने मुझे राय दी थी कि मैं घरेलू पारिवारिक बातें न लिखूं। तब मैंने दृढ़निश्चय के साथ यह कहा था-मैं इन्हें भी जरूर लिखूंगी। मेरी आत्मकथा दलित आत्मकथा होने के साथ एक दलित स्त्री की आत्मकथा है। इसे दलित महिला विमर्श की दृष्टि से भी देखा जाना चाहिए।'' (टाकभौरे 12)

यहाँ अनुभव का रूपांतरण अत्यंत स्पष्ट है। घरेलू प्रसंगों को हटाने की सलाह दरअसल स्त्री-अनुभव को 'अमहत्वपूर्ण' मानने की प्रवृत्ति है। लेखिका का प्रतिरोध इस धारणा को तोड़ता है। यहाँ अनुभव का रूपांतरण इस प्रकार है-

घरेलू पीड़ा ''विमर्शात्मक स्वीकृति'' स्त्री-स्वायत्तता की स्थापना। अर्थात् निजी क्षेत्र को राजनीतिक विमर्श में रूपांतरित कर दिया जाता है।

6. वैचारिक जागरण : अध्ययन से आत्मनिर्माण तक

डॉ. तुलसीराम की आत्मकथा मणिकर्णिका में वैचारिक परिवर्तन का प्रसंग उल्लेखनीय है-''मैं राहुल सांकृत्यायन की पुस्तक 'बौद्ध धर्म' तथा प्रथम सदी के महान बौद्ध कवि अश्वघोष की कालजयी रचना 'बुद्धचरित' को बार-बार पढ़ता; विशेष रूप से बुद्ध के प्रथम उपदेश को मैं रट सा गया। उनके अनात्मवाद को हर क्षण दोहराता। अंततोगत्वा राहुल के साथ-साथ बुद्ध ने मेरी नास्तिकता पर अमिट ठप्पा लगा दिया। मेरे मस्तिष्क तथा हृदय के सारे दरवाजे ईश्वर तथा अंधविश्वासों के लिए हमेशा के लिए बंद हो गये। मैं पूर्णरूपेण नास्तिक हो गया। नास्तिकता ने मुझे हद से ज्यादा मानवीय बना दिया। मैं विशुद्ध रूप से मानवता का पुजारी बन गया।'' (तुलसीराम 63)

यहाँ अनुभव केवल धार्मिक आस्था का त्याग नहीं है। यह अध्ययन और तर्कशीलता के माध्यम से चेतना-परिवर्तन है। अनुभव का रूपांतरण-

आस्था, अध्ययन, तर्क, मानवीय दृष्टि। इस प्रक्रिया में लेखक पीड़ित नहीं, बल्कि विचारक के रूप में स्थापित होता है।

7. अनुभव से वैचारिक रूपांतरण की प्रक्रिया : एक विश्लेषणात्मक संरचना

उपरोक्त उदाहरणों के आधार पर इक्कीसवीं सदी की आंबेडकरवादी आत्मकथाओं में अनुभव के वैचारिक रूपांतरण को निम्न चरणों में समझा जा सकता है-

(क) अनुभव की पहचान

लेखक अपने जीवन की घटनाओं को स्मृति में पुनर्स्थापित करता है।

(ख) संरचनात्मक विश्लेषण

घटना के पीछे निहित सामाजिक, धार्मिक या सांस्कृतिक सत्ता-संबंधों की पहचान की जाती है।

(ग) वैचारिक संस्पर्श

अध्ययन, आंदोलन, संगठन या बौद्धिक परंपरा से जुड़ाव के माध्यम से अनुभव को व्यापक संदर्भ मिलता है।

(घ) अभिव्यक्ति और प्रतिरोध

लेखन स्वयं प्रतिरोध का माध्यम बन जाता है।

8. इक्कीसवीं सदी की विशिष्टता

(क) नई सदी की आत्मकथाओं में तीन प्रमुख परिवर्तन स्पष्ट हैं।

(ख) भाषा अधिक निर्भीक और तर्कपूर्ण है।

(ग) लेखक आत्मदया से मुक्त होकर आत्मसम्मान की स्थापना करता है।

(घ) अनुभव निजी सीमा से निकलकर सामाजिक चेतना का दस्तावेज़ बन जाता है।

इस प्रकार आत्मकथा एक साहित्यिक विधा से आगे बढ़कर वैचारिक हस्तक्षेप का उपकरण बनती है।

9. निष्कर्ष

इक्कीसवीं सदी की आंबेडकरवादी आत्मकथाएँ अनुभव को केवल स्मृति के रूप में प्रस्तुत नहीं करतीं। वे उसे विश्लेषित करती हैं, प्रश्न करती हैं और वैचारिक रूप में पुनर्संरचित करती हैं। जातिगत अपमान, सामाजिक बहिष्कार, धार्मिक आडंबर, स्त्री–अनुभव और वैचारिक जागरण–इन सभी का अंतिम परिणाम सामाजिक चेतना का निर्माण है। इस प्रकार यह निष्कर्ष स्थापित किया जा सकता है कि आंबेडकरवादी आत्मकथा अनुभव को विचार में और विचार को सामाजिक परिवर्तन की दिशा में रूपांतरित करने की सशक्त साहित्यिक प्रक्रिया है।

संदर्भ–सूची :

1. बेचैन, श्यौराज सिंह, मेरा बचपन मेरे कंधों पर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
2. हंस, बुद्ध शरण, टुकड़े–टुकड़े आईना, भाग–1, आंबेडकर मिशन प्रकाशन, पटना, 2014
3. प्रसाद, माता, झोपड़ी से राजभवन, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018
4. टाकभौरे, सुशीला, शिकंजे का दर्द, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2020
5. तुलसीराम, मणिकर्णिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2025

बुद्ध शरण हंस के कहानी-साहित्य में आंबेडकरवादी चेतना : एक आलोचनात्मक अध्ययन

- देवचंद्र भारती 'प्रखर'

शोध सारांश -

यह शोध-पत्र आंबेडकरवादी चेतना की अवधारणा को सैद्धांतिक आधार पर स्पष्ट करते हुए बुद्ध शरण हंस के कहानी-साहित्य का विश्लेषण करता है। आंबेडकरवादी चेतना को दस प्रमुख बिंदुओं में व्यवस्थित किया गया है। इन बिंदुओं के आलोक में 'तीन महाप्राणी' (1996) तथा 'को रक्षति वेद:' (2003) कहानी-संग्रहों की प्रमुख कहानियों का विवेचन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बुद्ध शरण हंस का कथा-साहित्य न केवल वैचारिक प्रतिरोध का दस्तावेज है, बल्कि वह सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति का कार्यक्रम भी प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द : आंबेडकरवादी चेतना, बुद्ध शरण हंस, समता, धम्म, सामाजिक क्रांति

1. प्रस्तावना

आंबेडकरवादी चेतना भारतीय समाज की संरचनात्मक असमानताओं के विरुद्ध वैचारिक प्रतिरोध की संगठित अभिव्यक्ति है। यह चेतना बुद्ध के धम्म, ज्योतिराव फुले की सामाजिक दृष्टि और डॉ. भीमराव आंबेडकर के संवैधानिक-मानवतावाद से निर्मित होती है। समकालीन वैचारिक स्पष्टता के आधार पर आंबेडकरवादी चेतना को दस बिंदुओं में समेकित किया गया है।

2. आंबेडकरवादी चेतना : सैद्धांतिक रूपरेखा

आंबेडकरवादी चेतना के प्रमुख दस बिंदु निम्नलिखित हैं-

(1) बुद्ध और उनके धम्म को डॉ० आंबेडकर के –ष्टिकोण से स्वीकार करना।

(2) ईश्वर और आत्मा के अस्तित्व को नकारना।

(3) वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना।

(4) हिंदू देवी-देवताओं को काल्पनिक मानना तथा उनकी चर्चा से विमुख रहना।

(5) जातिवाद, लिंगवाद और वर्चस्ववाद का विरोध।

(6) अंतर्जातीय विवाह का समर्थन।

(7) अंधविश्वास, ढोंग और पाखंड की आलोचना।

(8) समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, न्याय और प्रेम की भावना।

(9) ''शिक्षित हो, संगठित हो और संघर्ष करो'' की प्रेरणा।

(10) मैत्री, करुणा और शील का संदेश।

(आंबेडकरवादी कविता के प्रतिमान, पृष्ठ 82)

इन बिंदुओं से स्पष्ट है कि आंबेडकरवादी चेतना केवल सामाजिक विरोध नहीं, बल्कि वैचारिक पुनर्निर्माण का कार्यक्रम है।

3. बुद्ध शरण हंस रू व्यक्तित्व और कृतित्व

आंबेडकरवादी साहित्यकारों में बुद्ध शरण हंस (8 अप्रैल 1942) का नाम प्रमुख है । हंस जी ने केवल आंबेडकरवादी साहित्य का सृजन ही नहीं किया है, बल्कि उन्होंने आंबेडकर-मिशन और आंदोलन में समर्पित भाव से प्रतिभाग भी किया है । उन्होंने लंबे समय तक आंबेडकर-मिशन पत्रिका का संपादन एवं प्रकाशन किया है। हंस जी मूलत: गद्य लेखक हैं । उनके तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हैं - 'देव साक्षी है', 'तीन महाप्राणी' और 'को रक्षति वेद:'। बुद्ध शरण हंस की कहानियाँ आंबेडकरवादी दृष्टि से परिपूर्ण और सोद्देश्य हैं। उन्होंने बहुजन समाज के लोगों को अंधविश्वास और विषमता की भावना से मुक्त करके उन्हें सम्यक दृष्टि प्रदान करने तथा उनके मन में बौद्ध-आंबेडकरवादी चेतना का संचार करने हेतु योजनाबद्ध तरीके से व्यवस्थित लेखन किया है ।

4.'तीन महाप्राणी'(1996) : प्रतिरोध और पुनर्संरचना

इस कहानी-संग्रह में कुल तेरह कहानियाँ हैं, जिनमें छः कहानियों 'बुध सरना कहानी लिखता है', 'देव दर्शन', अरे अधम! मुझे मत बेच', 'अखंड कीर्तन', 'शिवजी का अंडा' और 'ब्रह्मज्ञान' में तथाकथित ब्राह्मणों के दुश्चरित्र, ढोंग, पाखंड और धूर्तता का यथार्थ चित्रण किया गया है। जबकि शेष सात कहानियों 'धिकधिक् रे ब्राह्मण', 'माता का भार', 'धम्म जीवन', 'बुद्धम शरणम गच्छामि', 'भोज के कुत्ते', 'कामरेड' और 'तीन महाप्राणी' में सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांति हेतु प्रेरणा का समावेश है ।

(क)'धिक-धिक् रे ब्राह्मण'

'धिक्धिक् रे ब्राह्मण' कहानी में 'हंस' जी ने स्वतंत्रता के पश्चात सामान्य वर्ग और वंचित वर्ग के लोगों की स्थिति में हुये सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन को रेखांकित किया है। इस कहानी का नायक सुमन रवि बी.डी.ओ. के पद पर सेवारत था। उसका ड्राइवर टिकू तिवारी तथा चपरासी बुद्धन पंडित था। सुमन रवि को राजगृह जाना जरूरी था, लेकिन ड्राइवर नहीं आया था। इसलिए उसने स्वयं जीप स्टार्ट की और बुद्धन पंडित को साथ ले लिया। रास्ते में उसे जोर की टट्टी (शौच) लगी। वह अपनी गाड़ी की चाल बढ़ाते हुए कई किलोमीटर तक आसपास देखा, लेकिन उसे कहीं पानी नजर नहीं आया। जब उस अनैच्छिक क्रिया पर सुमन रवि का नियंत्रण नहीं रहा, तो उसने अंत में जीप रोक दी और बुद्धन पंडित को पानी लाने के लिए भेजा। बुद्धन को धीरे-धीरे जाते हुए देखकर उसने कहा, '' पांडे! दौड़कर जाओ। तू तो ऐसे चल रहा है, जैसे पाँव में मेहंदी लगाकर ससुराल जा रहा है। और सुन! यदि दूर में पानी मिले, तो किसी हाड़ी, चुक्का में पानी लेते आना। यदि कोई बर्तन नहीं मिले, तो अपनी धोती को पूरा भिंगोकर पानी लेते आना। उतना से भी मेरा काम बन जाएगा। अब दौड़, पीछे मत ताकना।''1, बुद्धन पंडित पानी खोजने के लिए तो चल दिया, लेकिन उसे अपनी दुर्दशा पर दुःख हो रहा था। वह सोच रहा था कि क्या दुर्दशा है? अछूत शौच करता है और ब्राह्मण उसके लिए पानी खोजता है। यह भ्रष्टयुग नहीं, तो और क्या है? बुद्धन पंडित को गुजरा जमाना याद आ रहा था, जब अछूत ब्राह्मण के पाँव पर पानी गिराने के भी योग्य नहीं था और वर्तमान में ब्राह्मण चमार के चूतड़ (नितंब) पर पानी गिराने के लिए विवश था। बुद्धन पानी की खोज में बहुत दूर निकल गया था। वह पसीना-पसीना हो गया था और हाँफ भी रहा था। अचानक उसे पानी दिखाई दिया, लेकिन उसके सामने पानी ले जाने की समस्या थी। 'हंस' जी के शब्दों में, ''साहब का आदेश बुद्धन को स्मरण हो आया। उसने अपनी धोती खोली, पानी में भिंगोया और दौड़ता हुआ जीप को खोजता-निहारता भागा। भींगी हुई धोती से पानी और बुद्धन के शरीर से पसीना टप-टप चू रहा था।''2, यह कहानी तथाकथित ब्राह्मणों को परिवर्तित समय के साथ अपने विचारों में परिवर्तन करने का संदेश देती है तथा उन्हें सचेत करती है कि वे वंचित वर्ग को निर्बल समझकर अब उन पर अत्याचार करने का प्रयास न करें । साथ ही, यह कहानी वंचित वर्ग के लोगों को अपने पद का भरपूर लाभ उठाने और अपने शत्रु-वर्ग को सबक सिखाने का भी संदेश देती है।

(ख)''माता का भार''

'माता का भार' कहानी की कथावस्तु कमालपुर गाँव के ब्राह्मणों और उससे सटे हुये सुखदेव टोला के चमारों के बीच परंपरा संबंधी विवाद पर आधारित है। इस कहानी का नायक कमल नामक युवक है। वह बुद्धिजीवी और शालीन था। जब सुखदेव टोला के लोग कलकत्ता, बनारस, दिल्ली आना-जाना शुरू कर दिये, तो उस टोले में परिवर्तन की लहरें दौड़ने लगीं। सबसे पहले लोगों ने दूसरों की मजदूरी करना छोड़कर स्वतंत्र रोजगार करना शुरू कर दिया । स्वतंत्र रोजगार से लोगों में स्वतंत्र विचार पैदा होने लगे। फटे-पुराने चिथड़ों में लिपटी अर्धनग्न महिलाओं के शरीर पर सिंथेटिक की हरी-पीली साड़ियाँ लहराने लगी। जहाँ पहले उस टोले के बच्चे गाय, सूअर के पीछे घूमते नजर आते, अब वे लंबे-चौड़े झोले लेकर स्कूल आने-जाने लगे। परिवर्तन की लहर में लहराते लोगों ने मरी-मुवारी नहीं उठाने-फेंकने का संकल्प ले लिया। इसलिए जब कमालपुर गाँव के लुच्चा मिसिर की गाय मर गयी, तो वह अन्य ब्राह्मणों को साथ लेकर सुखदेव टोला में पहुँच गया। लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी। उस भीड़ में कमल भी उपस्थित था। एक प्रौढ़ ब्राह्मण ने निर्णयात्मक फैसला सुनाया, ''लुच्चा मिसिर की गाय मर गयी है। इसे अपने लोगों से कहकर फेंकवा दो। जैसे पहले से होता आ रहा है, वह रिवाज कायम रहना चाहिए।'' यह सुनकर कमल ने कहा, ''सैकड़ों रिवाज, रीति, परंपरा को आप लोग तोड़ गये, उस पर विवाद नहीं है। आज भी अपने रीति-रिवाज को आप लोग धड़ल्ले से तोड़ रहे हैं। यह बात समझ में नहीं आती कि मरी गाय उठाने, फेंकने की परंपरा पर आप लोग क्यों अड़े हुये हैं? उस ब्राह्मण प्रौढ़ ने पूछा, ''कौन सी परंपरा ब्राह्मणों ने तोड़ी है, जरा हम भी तो सुनें।'' तो कमल ने कहा, ''बूटन मिसिर अंडा बेचता है। क्या यह ब्राह्मणों की परंपरा है? गेंदा पांडे चाय बेचता है। सबकी जूती प्याली ढोता है। क्या यह ब्राह्मणों की परंपरा है? लुच्चा मिसिर खुद शराब बेचता है। क्या यह ब्राह्मणों

की परंपरा है? रीझन उपाध्याय चोरी के केस में चार साल से जेल की हवा खा रहा है । क्या यह ब्राह्मणों की परंपरा है ? जिस तरह नवलपुर बाजार में सीवन मिसिर की पिटाई हुई, कारण सबको मालूम है । क्या यह ब्राह्मणों की परंपरा है? आप लोगों ने सैकड़ों परंपराएँ तोड़ दी, तब हम लोगों ने एक परंपरा तोड़ दी है। हम लोगों ने जानवर, जूते का कारोबार बंद कर दिया है।'' ख्3, इन संवादों से स्पष्ट है कि इस कहानी का नायक कमल तर्कशील और क्रांतिकारी युवक है। वह बेगारी और गुलामी की प्रथा का विरोधी है। कमल घुमा-फिराकर कोई बात नहीं करता है, क्योंकि वह स्पष्टवादी है। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा, ''यह गाय तो लुच्चा मिसिर की है। माँ भी उसी की हुई। इस गाय का दूध उसने पीया। इसका बछड़ा उसने लिया। इसके गोबर का भी उपयोग लुच्चा मिसिर ने ही किया। आज जब गाय मर गयी, तब लुच्चा मिसिर के लिए उसकी माता भार बन गयी। माता के शव को अछूतों से उठवाना, फेंकवाना, चिरवाना, उसकी खाल उधेड़वाना, क्या यह गौ माता का अपमान नहीं है?''4, बुद्ध शरण हंस जी ने इस कहानी के माध्यम से तथाकथित ब्राह्मणों की निम्न मानसिकता पर कटाक्ष किया है। क्योंकि एक तो वे गाय (पशु) को माता कहते हैं, दूसरे उसी माँ की मृत्यु होने पर उसे कंधा देने से इनकार करते हैं। तथाकथित ब्राह्मण स्वच्छता और पवित्रता का ढोंग करते हैं। वे कामचोर हैं, इसलिए अपनी गौ-माता का भार स्वयं उठाने की बजाय श्रमिक लोगों के कंधों पर लादना चाहते हैं। यह कहानी वंचित वर्ग के लोगों को इस प्रकार के ढोंग से सावधान करती है।

(ग) 'धम्म जीवन'

'धम्म जीवन' कहानी में हंस जी ने बौद्ध धम्म के अनुसार जीवन जीने की विशेषता का वर्णन किया है। इस कहानी का नायक मंगल नामक युवक है, जो समझदार और जिज्ञासु है । धरमपुर गाँव में बीस परिवार भूमिहार, दस परिवार ब्राह्मण, तीस परिवार कुर्मी, दस परिवार अहीर, तेरह परिवार मुसलमान, चौबीस परिवार कोइरी, आठ-आठ परिवार कहार और बढ़ई रहते थे तथा उसके बगल में स्थित करमपुर टोला में बारह परिवार चमार, दस परिवार दुसाध, पाँच परिवार मेहतर और अठारह परिवार रजवार रहते थे। एक दिन करमपुर टोला में एक बौद्ध भिक्षु पधारे। उन्होंने 'नमो बुद्धाय-जय भीम' कहकर करमपुर के लोगों का अभिवादन किया। लोगों ने ऐसी वेशभूषा और ऐसा अभिवादन करने वाला व्यक्ति पहली बार देखा था। इसलिए वे अपनी समझ के अनुसार उन्हें योगी, सन्यासी, साधु, औघड़ इत्यादि समझ रहे थे। बौद्ध भिक्षु ने अपना परिचय देते हुए कहा, ष्पहले आप यह जान लें कि मैं बाबा नहीं हूँ। न मैं योगी हूँ, न सन्यासी, न औघड़, न साधू, न साधक, न साईं। मैं बौद्ध धम्म का प्रचारक हूँ । मुझे श्भन्तेश कहें, तो अच्छा हो। भन्ते का मतलब होता है बौद्ध धम्म का प्रचारक भिक्षु। भिक्षु का मतलब हिंदू धर्म में भीख माँगने वाला होता है, किंतु बौद्ध धम्म में भिक्षु का मतलब शिक्षा देने वाला होता है।''5, मंगल ने बौद्ध भिक्षु के समक्ष गौतम बुद्ध, ज्योतिराव फुले तथा बाबा साहेब आंबेडकर के बारे में अपनी जिज्ञासा प्रकट की, तो बौद्ध भिक्षु ने कहा, ''गौतम बुद्ध, ज्योतिराव फुले तथा बाबा साहेब आंबेडकर इन तीनों महापुरुषों ने भाग्य, भगवान, आत्मा, परमात्मा स्वर्ग, नरक को बिल्कुल झूठ और गरीबों को ठगने वाली बात बताया है। ये सब अंधविश्वास हैं। इन सब अंधविश्वासों से आप बचें, दूर रहें।'' यह सुनकर दूसरे युवक ने पूछा, ष्किंतु ब्राह्मण लोगों को तो दिन-रात भाग्य, भगवान, आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग, नरक की ही बात बतलायी जाती है। दिन-रात मंदिर, पूजा, यज्ञ की रट लगाये रहते हैं।'' इस पर बौद्ध भिक्षु ने कहा, ''जिसका जो व्यवसाय है, वह रात-दिन वही काम करता है। इस व्यवसाय से उस व्यक्ति की जीविका चलती है। बनिया रात-दिन दुकान में बैठकर नमक, तेल, चावल बेचता है। न बेचे, तब वह भूखों मरेगा । किसान रात-दिन खेत-खलिहान में लगा रहता है। यदि किसान खेत-खलिहान में न लगे, तो वह भूखों मरेगा। मिल मालिक रात दिन मिल चलाने में व्यस्त रहता है। यदि वह न चलाए, तब वह भूखों मरेगा। इसी तरह भाग्य, भगवान, आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग, नरक ब्राह्मणों का रोजगार है । इन सबके प्रचार से उनकी जीविका चलती है। यदि इन सबको वह छोड़ देगा, तब वह भी भूखों मरेगा या तुम्हारी तरह कड़ी मेहनत करके पेट पालना पड़ेगा।''6, बुद्ध शरण हंस जी की यह कहानी तथाकथित ब्राह्मणों द्वारा प्रचारित आत्मा, परमात्मा और भाग्य संबंधी अंधविश्वास का पर्दाफाश करती है तथा धम्म के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है ।

(घ) 'बुद्धं सरणं गच्छामि'

'बुद्धं सरणं गच्छामि' कहानी के माध्यम से श्हंसश जी ने हिंदू देवी-देवताओं के प्रति आस्था न रखने और मंदिर में प्रवेश करके पूजा-पाठ, कीर्तन-भजन न करने का संदेश दिया है। साथ ही, उन्होंने मंदिर की बजाय शिक्षालय खोलने के लिए प्रेरित किया है। इस कहानी में अमर और कुंदन दोनों मित्रों ने मिलकर जगजीवन नगर के वंचित-वर्ग के लोगों को जागरूक किया तथा परिणामस्वरूप गाँव के नवयुवकों ने दुर्गा-मंदिर पर कब्जा करके 'रविदास शिक्षा सदन' की स्थापना कर दी। बुद्ध शरण 'हंस' जी के शब्दों में, ''महीने के अंत-अंत दुर्गा मंदिर पर जगजीवन नगर के नवयुवकों ने कब्जा कर लिया। 'रविदास

शिक्षा सदन' का बोर्ड मंदिर में लटक गया। दुर्गा की जगह संत रविदास, बाबा साहेब आंबेडकर का चित्र लगा दिया गया। अंधविश्वास की जगह आत्मविश्वास, पाखंड की जगह ज्ञान ने ले लिया। पुरुषों को कुंदन, महिलाओं को कमली ने रात-दिन समझाया। जय भीम, जय रविदास कंठ-कंठ से निकलने लगा। रविदास शिक्षा सदन में बुद्ध, ईशा, रविदास, कबीर दास, ज्योतिराव फुले, नारायण गुरु, आंबेडकर, जगदेव प्रसाद, ललई सिंह यादव के चित्र लग गये।''7, कहानी के अंत में विधुर कुंदन ने विधवा कमली से विवाह करने का प्रस्ताव समाज के बीच रखा, तो कुछ लोगों ने आपत्ति जताते हुए कहा, ''बड़ी अजीब बात है कुंदन बाबू! कमली विधवा है, दुसाध जाति की है। आप विधुर हैं, चमार हैं। यह असंभव है।'' यह सुनकर अमर ने कहा, ''हम न दुसाध हैं, न चमार, न पासी, न डोम, न धोबी, न मुसहर। हम सभी संत रविदास के वंशज हैं, बाबा साहेब आंबेडकर के सेनानी भीमबंधु हैं। हम हिंदू नहीं हैं, बौद्ध हैं। जब तक हम हिंदू रहेंगे, दुसाध, चमार, कोइरी, गोवार बने बिखरे रहेंगे। हम बौद्ध बनकर एक होंगे, नेक होंगे।''8, अंततः कथित चमार उपजाति के युवक कुंदन का विवाह कथित दुसाध उपजाति की युवती कमला के साथ हो गया। इस प्रकार यह कहानी अंतर्जातीय/ अंत-उपजातीय विवाह के लिए प्रोत्साहित करती है।

(ङ) 'भोज के कुत्ते'

'भोज के कुत्ते' कहानी में 'हंस' जी ने कथित ब्राह्मणों द्वारा भोज खाने और चुराने की प्रवृत्ति का यथार्थ चित्रण किया है। तीनकौड़ी साव के यहाँ भोज था। साव के पिता का देहांत हो गया था। तेरही (ब्राह्मणभोज) का आरंभ करते हुए कथित ब्राह्मण पत्तलों पर पड़े लड्डू-पूरी पर टूट पड़े। वे सब खा भी रहे थे और अपने झोले में खाना चुरा भी रहे थे। भोज खिलाने वाले युवकों ने उनका यह बर्ताव देखकर वहाँ काँव-काँव कर रहे कौवों की ओर संकेत करते हुए कथित ब्राह्मणों को चूतिया और हरामजादा कहकर उनका उपहास किया। वे नाम के ब्राह्मण समझ गये कि चूतिया और हरामजादा जैसे शब्द उन्हीं के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं। साथ ही, डंडा से मारने की भी बात की जा रही है, तो उन्होंने वहीं पर खड़े साव से इस संबंध में शिकायत की। साव कुछ जवाब देने वाला था कि बीच में एक बूढ़े ब्राह्मण ने दाँत किटकिटाकर कहा, ''साव! जवाब दो । तुमने हमें खाने के लिए बुलाया था या बेइज्जत करने के लिए?'' सावजी का तेवर बदल गया। उसने चिल्लाकर ब्राह्मणों से पूछा, ''यदि यही बात मैं तुम लोगों से पूछूँ, तो क्या जवाब दोगे?'' बूढ़े ब्राह्मण ने तैश में कहा, ''पूछो, क्या पूछना है? तुम्हारा सर्वनाश निश्चित है।'' साव जी ने पूछा, ''मैंने तुम लोगों को खाने के लिए बुलाया था या चुराने के लिए?'' कई ब्राह्मण एक साथ पूछ बैठे, ''क्या हम लोग चोर हैं?9, यह सुनकर साव का तेवर बदल गया। उसने भी अधिक विनती करना उचित नहीं समझा और कहा, ''यदि यही बात मैं तुम लोगों से पूछूँ, तो क्या जवाब दोगे?'' जब उनके झोले की तलाशी लेने की बात की गयी, तो सब के सब भाग खड़े हुये। भागते समय उनके झूले में भरे हुये लड्डू-पूरी सब बिखर गये। चूँकि उन्होंने आधा-अधूरा खाया था, इसलिए उनके पत्तल पर लड्डू-पूरी पड़े थे, जिसे कुत्ते खाने लगे थे। एक गृहस्थ ने चिल्लाया, ''मारो-मारो, देखो साले कुत्तों ने यज्ञ भ्रष्ट कर दिया।'' लेकिन साव ने बहुत ही गंभीरता और शालीनता के साथ कहा, ''खाने दो भाई, खाने दो। जो कुत्ते थे, वे भाग गये। असली संत ये ही हैं। ये सिर्फ खाएँगे। एक दाना भी ये चुराकर नहीं ले जाएँगे। जिसका चरित्र उत्तम है, वही ब्राह्मण है। जो ठग है, पाखंडी है, बातुनी है, लम्पट है, लुच्चा है, वह ब्राह्मण तो क्या, इन कुत्तों से भी गया गुजरा है।''10, 'हंस' जी की यह कहानी प्रत्यक्ष रूप से कथित ब्राह्मणों के भ्रष्ट आचरण को चित्रित करती है तथा परोक्ष रूप से तेरही (ब्राह्मणभोज) का विरोध करती है। कहानी के अंत में साव को भी यह अनुभव हो गया कि कथित ब्राह्मणों के नाम पर भोज खिलाने की परंपरा बिल्कुल गलत है।

(च) 'कॉमरेड'

'कॉमरेड' कहानी में बुद्ध शरण हंस जी ने भारतीय मार्क्सवाद को वंचित वर्ग हेतु एक षड्यंत्र के रूप में प्रस्तुत किया है। दलजीत पासवान का ऊँचा बनता हुआ मकान देखकर लुच्चा मिसिर ने रणछोड़ सिंह से मिलकर कूटनीति की। रणछोड़ सिंह ने दलजीत के पास जाकर 'नमस्ते कॉमरेड' का संबोधन करते हुए लाल-सलाम ठोका। उसी समय जंगबहादुर रविदास पहुँचा। उसने दलजीत पासवान और रणछोड़ सिंह दोनों को संबोधित करते हुए श्जय भीम भाई लोगश कहा। दलजीत ने तो प्रत्युत्तर में 'जय भीम भाई जय भीम' कहा, लेकिन रणछोड़ सिंह के मन में आग लग गयी। दलजीत पासवान और जंगबहादुर रविदास दोनों सच्चे आंबेडकरवादी मशीनरी थे। उन दोनों ने लुच्चा मिसिर और रणछोड़ सिंह की चाल को भलीभाँति समझ लिया था। आपस में वार्तालाप करते समय दलजीत ने भारतीय मार्क्सवादियों के बारे में बताया कि कम्युनिस्ट नेता कम्युनिज्म की ट्रेनिंग लेने रूस और चीन जाते हैं, लेकिन अभी तक किसी अछूत परिवार के कॉमरेड को इन्होंने ट्रेनिंग के लिए रूस और चीन जाने नहीं दिया। यह सुनकर जंगबहादुर रविदास ने कहा, ष जिन झोपड़ियों पर लाल झंडे लगे हुये हैं, जरा उनके भीतर

झाँककर देखो, खाने को अन्न नहीं, पहनने को वस्त्र नहीं, जीने को रोजगार नहीं। शिक्षा नहीं, सफाई नहीं। प्रगति के प्रति न जानकार, न प्रयत्नशील । जिन झोपड़ियों पर लाल झंडे लगे हुये हैं, उन झोपड़ियों से अशिक्षा, अभाव, कुसंस्कार की बदबू आती है। इस देश में गरीबों के लिए कम्युनिज्म एक षड्यंत्र है भाई। गरीबों को गरीब बनाये रखने का षड्यंत्र, अशिक्षित को अशिक्षित बनाये रखने का षड्यंत्र। अपनी प्रगति के प्रति लापरवाह बनाकर किसी बनावटी समस्या में उलझाये रखने का षड्यंत्र।'' दलजीत पासवान ने भी उसके समर्थन में मार्क्सवादियों का चरित्र-विश्लेषण करते हुए कहा, ''ये कॉमरेड धर्म को विष कहते हैं, मगर सभी दकियानूस हिंदू हैं। ऊपरी तौर पर ये छुआछूत की निंदा करते हैं, किंतु किसी सवर्ण कॉमरेड ने न मनुस्मृति की होली जलाई जैसा कि बाबा साहेब आंबेडकर ने जलाई थी । वेद, पुराण, स्मृति, रामचरितमानस जैसे छुआछूत, जातिवाद फैलाने वाली पुस्तकों की निंदा कोई सवर्ण कम्युनिस्ट नहीं करता, फाड़ना और जलाना तो दूर की बात है। ये सवर्ण कम्युनिस्ट जाति में ही जीते हैं और जाति में ही मरते हैं। भारतीय कम्युनिस्ट के लोग 'बगुला कॉमरेड' हैं। मछलियों को सुरक्षा का उपदेश देकर उन्हीं का भक्षण करने वाले।''11, अगली सुबह लुच्चा मिसिर जंगबहादुर रविदास के घर आया और अभिवादन में 'जय श्रीराम रविदास भाई!' कहा, तो जंगबहादुर ने मुस्कुराकर कहा, ''जय भीम मिसिर जी!''12, यह सुनकर लुच्चा मिसिर का मुँह कड़वा हो गया। वह मन ही मन उसे गाली देने लगा। इस प्रकार दोनों आंबेडकरवादी मिशनरियों ने उन दोनों पाखंडियों को उनकी चाल में सफल नहीं होने दिया। रणछोड़ सिंह चाहता था कि दोनों मिशनरी मार्क्सवादी आंदोलन से जुड़कर अपने मुख्य आंदोलन से भटक जाएँ। लुच्चा मिसिर चाहता था कि वे दोनों भक्ति-भजन में लीन होकर मंदिर-निर्माण करने का प्रयोजन करें, जिससे कि लुच्चा मिसिर का धंधा चल सके। 'हंस' जी की यह कहानी वंचित-वर्ग के लोगों को छद्म मार्क्सवाद और हिंदूवाद से सावधान रहने तथा बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर जी के मिशन को पूरा करने हेतु समर्पित रहने की शिक्षा देती है।

(छ) 'तीन महाप्राणी'

'तीन महाप्राणी' कहानी एक ऐसी कहानी है, जिसमें तीन नायक हैं और तीनों जानवर हैं। एक है सुअर, दूसरा है कुत्ता, तीसरा है गदहा। वैसे तो, हिंदी में प्रेमचंद-युग से ही कहानी का स्वरूप मनुष्य-पात्रों को आधार बनाकर सृजित किया जाने लगा। पहले की कहानियों की तरह पशु-पक्षियों को मनुष्यों से संवाद करते हुए चित्रित करना कहानीकारों को स्वीकार नहीं था। लेकिन जब कहानी में मनुष्य-पात्रों की जगह पशु हों तथा वे मनुष्य के प्रतीक हों, तो बात कुछ और हो जाती है। 'तीन महाप्राणी' कहानी में सुअर ब्राह्मण का रूपक है, कुत्ता क्षत्रिय का रूपक है और गदहा वैश्य का रूपक है। कहानीकार बुद्ध शरण श्हंसश जी ने उक्त तीनों पशुओं को जिन रूपकों से संबोधित किया है, उसका धार्मिक आधार है। हिंदू धर्म वर्ण-व्यवस्था पर आधारित धर्म है । ब्राह्मण-वर्ण के लोग सुअर की भाँति व्यवहार करते हैं। वे लोग स्वयं तो निकृष्ट कर्म में लीन रहते हैं, लेकिन वंचित-वर्ग के लोगों से छुआछूत और भेदभाव का बर्ताव करते हैं। क्षत्रिय-वर्ण के लोग कुत्ते की भाँति व्यवहार करते हैं। वे लोग ब्राह्मणों के संकेत पर अन्य वर्णों के साथ कुत्तों की भाँति लड़ने के लिए तत्पर हो जाते हैं । वैश्य-वर्ण के लोग गदहे जैसा व्यवहार करते हैं । वे ब्राह्मण-वर्ण और छत्रिय-वर्ण की सेवा में लगे रहते हैं। वे हिंदू धर्म का बोझ गदहे की भाँति चुपचाप ढोते रहते हैं। तीनों पशुओं के परस्पर वार्तालाप से हिंदू धर्म, समाज और संस्कृति के अनेक भेद खुलते हैं। सुअर ने शूद्रों की ब्राह्मण-भक्ति का लंबा उदाहरण देते हुए कहा, ''आज बाल ठाकरे शूद्र हमारे सनातन धर्म की रक्षा के लिए आकाश-पाताल एक कर रहा है। आडवाणी शूद्र सनातन धर्म का विजय-पताका लेकर हमारा विजय-रथ हाँक रहा है। विवेकानंद शूद्र ने देश से विदेश तक सनातन धर्म का डंका बजाया। कल्याण सिंह शूद्र ब्राह्मणवाद की रक्षा के लिए बजरंग-दल सेना ही बना लिया है। इस बजरंग-दल सेना के आगे रामविलास पासवान की दलित-सेना और कांशीराम का बहुजन समाज पिद्दी है पिद्दी। बाल ठाकरे शूद्र की शिव-सेना विनय कटियार का बजरंग-दल ने बाबरी मस्जिद को चुटकी से मसल दिया। सभी शूद्र ही तो थे, जिन्होंने हमारे सनातन धर्म की रक्षा के लिए अरबों-खरबों रुपए 'राम-ईंट' के रूप में दान भी दिये और बाबरी मस्जिद को धूल में मिला दिये। हम ब्राह्मण तो सिर्फ तमाशा देख रहे थे। शूद्र जगजीवन राम ने हमारे सनातन धर्म की रक्षा के लिए क्या नहीं किया? हमारे कहने पर ही तो वह डॉ. आंबेडकर का विरोध करता रहा।''13, यह सुनकर कुत्ते ने अत्यंत रोष और दु:ख में अपनी जाति का पक्ष सुअर के समक्ष रखते हुए कहा, ''ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र के बहकावे में आकर क्षत्रिय राजाओं ने बौद्ध सम्राट बृहद्रथ का सर कलम कर बौद्धों का राज बर्बाद कर दिया। ब्राह्मणवाद की रक्षा के लिए क्षत्रियों ने ब्राह्मणों का इशारा पाकर महाप्रतापी सम्राट हर्षवर्धन को पराजित करने में कुछ भी बाकी नहीं रखा। ब्राह्मण शंकराचार्य, कुमारिल भट्ट और मंडन मिश्र के कहने पर क्षत्रियों ने लाखों बौद्धों की गर्दनें उतार दीं। ब्राह्मणवाद की रक्षा के लिए ब्राह्मणों के कहने पर क्षत्रियों ने बौद्ध साम्राज्य

(मानवतावाद) समाप्त कर दिया और हैवानियत पर आधारित ब्राह्मण धर्म (सनातन धर्म) की पुनर्स्थापना कर दी। यह सब अन्याय, अनर्थ क्या क्षत्रियों ने अपने लिए किया है ? ब्राह्मण पुष्यमित्र द्वारा संकलित मनुस्मृति को क्षत्रियों ने क्या अपने लाभ के लिए काल में लागू किया? ब्राह्मणवाद की रक्षा के लिए ही तो शत्रुओं ने यह सब कुकर्म किया है।''14, गधे ने बड़ी गंभीरता से अपनी बात कहा, ''बबूल के काँटों को तोड़ने से तो बेहतर है कि बबूल को जड़ से काट दें। आर०एस०एस०, विश्व हिंदू परिषद तथा बजरंग दल ने तो घोषणा कर दिया कि भारतवर्ष का बँटवारा होने के बाद अब इस देश में कोई मुसलमान है ही नहीं। इन लोगों ने मुसलमानों को महमदिया हिंदू कहना शुरू कर दिया है। जैसे हम लोग वर्षों से इस देश के मूलनिवासियों को शूद्र और अछूत हिंदू कहते-कहते उन्हें सचमुच का थर्ड क्लासी हिंदू बनाकर अपने आप में पचा गये, उसी तरह से मुसलमानों को महमदिया हिंदू, ईसाइयों को मसीही हिंदू कहकर अपने आप में पचा जाने की जरूरत है।''15, 'हंस' जी की यह कहानी तथाकथित ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य लोगों द्वारा इस देश के मूलनिवासियों के प्रति किये जाने वाले षड्यंत्र का खुलासा करती है। इस कहानी का सूक्ष्म अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि कहानीकार बुद्ध शरण 'हंस' जी को हिंदू धर्म और हिंदू धर्म से संबंधित धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक संगठनों के षड्यंत्रों की विशेष जानकारी है। 'हंस' जी इस कहानी के माध्यम से इस देश के मूलनिवासियों को शत्रुओं के षड्यंत्र से अवगत कराये हैं, ताकि वे सतर्क होकर स्वयं को सुरक्षित रख सकें।

5. 'को रक्षति वेदः' (2003) : सामाजिक यथार्थ और सम्यक उपाय

'हंस' जी के इस कहानी-संग्रह में कुल अठारह कहानियाँ हैं, जिनमें पाँच कहानियाँ 'सर्वजीत', 'लक्खा मंदिर', 'जाती जाति नहीं जाती', 'कहिए दलित कवि जी' और 'दो भगवती' सामाजिक यथार्थ का चित्र प्रस्तुत करती हैं। जबकि शेष तेरह कहानियाँ 'फरिश्ते', 'अहिंसा परमो धम्म', 'फादर चकलाकल', 'गीदड़म्', 'हलबंदी', 'जानवर जी', 'गौ ब्राह्मण नमो-नमो', 'दो पैसे का भाईचारा', 'प्राण-प्रतिष्ठा', 'मिशनरी हूँ', 'जय अर्जक', 'जहर पोथी' और 'को रक्षति वेदः' बाबा साहेब डॉ० भीमराव आंबेडकर के समतामूलक समाज की स्थापना करने हेतु सम्यक उपाय की ओर संकेत करती हैं।

(क) 'फरिश्ते'

'फरिश्ते' कहानी का कथानक यह है कि रहीमपुर गाँव में नये-नये मास्टर तारा किरण बौद्ध नियुक्त हुये थे। वहाँ स्कूल में आया के रूप में चाँद-हसीना नाम की मुसलमान महिला थी, जिसे गाँव के लोग बुआ कहते थे। दोनों ने मिलकर उस गाँव में शैक्षिक क्रांति ला दी। दिन में लड़के-लड़कियों की पढ़ाई होती थी और रात में पुरुषों-महिलाओं की पढ़ाई। सामाजिक कार्य करते-करते मास्टर जी और बुआ दोनों एक-दूसरे को पसंद करने लगे थे। इस बात की भनक गाँव वालों को भी हो गयी थी। एक दिन रमजान अली के दालान में पाँच-दस लोग बैठकर आपस में बातचीत कर रहे थे। रमजान अली ने कहा, ''मास्टर जी अविवाहित हैं। बुआ बेवा है। दोनों हमउम्र हैं। नेक काम में दोनों चाँद-सूरज बने हुये हैं। दोनों अपनी जिंदगी में भी चाँद-सूरज बन जाएँ, तो क्या हर्ज है?'' यह सुनकर दयानंद बौद्ध ने आशंका प्रकट की, ''दोनों की राय पहले जान ली जाए। दोनों हो सकता है राजी न हों।'' मौलवी जी ने कहा, ''मगर मास्टर जी बौद्ध हैं, बुआ मुसलमान है।'' इस पर रमजान अली ने कहा, ''अरे इंसान तो हैं न दोनों। बौद्ध और मुसलमान वे दोनों अपने लिए होंगे। हम लोगों के लिए तो दोनों फरिश्ते हैं, फरिश्ते। फरिश्तों की न जात होती है, न घेराबंदी हो सकती है।''16, बुद्ध शरण 'हंस' जी की ने इस कहानी में लड़के-लड़कियों के साथ अनपढ़ पुरुषों और महिलाओं के लिए भी शिक्षा को महत्वपूर्ण और अनिवार्य दिखाया है। यह कहानी दो धर्मों के लोगों के बीच वैवाहिक-संबंध बनाने का प्रबल समर्थन करती है। इस कहानी में विधवा-पुनर्विवाह को स्वीकृति दी गयी है तथा अविवाहित मास्टर जी ने विधवा बुआ से विवाह करके वैवाहिक स्तर (अविवाहित और विधवा के बीच संबंध) की योग्यता-अयोग्यता को निरर्थक सिद्ध कर दिया है।

(ख) 'अहिंसा परमो धम्म'

'अहिंसा परमो धम्म' कहानी में रत्ना नाम की लड़की के माता-पिता का देहांत हो चुका था । वह अपनी नानी के साथ एक बौद्ध विहार के पास रहती थी, जिसमें भिक्षु शीलपुत्र उपासकों को धम्मोपदेश दिया करते थे । रत्ना जब स्कूल जाती, तो कुछ मनचले उसके साथ छेड़खानी करते थे। एक दिन तो उन्होंने हद कर दी। रात्रि का सुनसान प्रहर था। अचानक भिक्षु शीलपुत्र के कानों में चीख सुनाई पड़ी-''माँ बचाओ। भंते जी बचाओ।'' वे समझ गये कि चीख रत्ना की है और उस पर विपत्ति आ पड़ी है। उन्होंने अपने पास अंधेरे में लाठी-डंडा टटोलना चाहा, जो नहीं मिला। उन्हें सब्जी काटने वाला चाकू हाथ लग गया। वे उसी को लेकर आहिस्ते से रत्ना के घर के दरवाजे पर पहुँचे। दरवाजा खुला था। दुष्कर्मियों ने कमजोर दरवाजे को धक्का देकर तोड़ डाला था। दो बदमाश रत्ना को घसीट रहे थे। भिक्षु ने पीछे से एक बदमाश के पंजर में चाकू घोंप

दिया। चाकू पेट के अंदर धँसते ही एक बदमाश जमीन पर गिरकर छटपटाने लगा, दूसरा बदमाश रत्ना को छोड़कर बाहर भाग निकला। जब वहाँ ग्रामीण इकट्ठे हुये, तो ग्रामीण ने पूछा, ''भंते! इस बदमाश की हत्या किसने की है, रत्ना ने या आपने?'' भिक्षु ने पूरे विश्वास से निर्भयपूर्वक कहा, ''मैंने।'' ग्रामीण ने फिर पूछा, ''किंतु आप तो 'पाणातिपाता वेरमणि मनीषिका सिक्खापदं समादियामि' (प्राणी की हिंसा नहीं करनी चाहिए।), अहिंसा परमो धम्म (अहिंसा पवित्र धम्म है।) का पाठ पढ़ाते रहे हैं। फिर यह हिंसा?'' यह सुनकर भिक्षु शीलपुत्र ने हिंसा के संबंध में बुद्ध वचन की व्याख्या की और कहा, ''अपनी जान देकर या आततायी की जान लेकर किसी की या अपनी जान की रक्षा करना हिंसा है। किसी आततायी को अपनी या दूसरे की जान या इज्जत लूटने देना अहिंसा नहीं है।'' दूसरे ग्रामीण ने टिप्पणी की, ''भंते जी! खून करना भी अहिंसा है, यह पहला अनुभव सुन, देख रहा हूँ।'' तब भिक्षु शीलपुत्र ने लोगों को समझाया, यह खून और हत्या तो परिणाम हुआ उपासक। कारण हुआ आततायी का अत्याचार। अकारण हिंसा, हिंसा है। जहाँ अपनी या दूसरे की जान, इज्जत बचाने के लिए हिंसा ही एक विकल्प है, वहाँ हिंसा अनिवार्य है और यह भी अहिंसा ही है।''17, बुद्ध शरण श्हंसश जी की यह कहानी अहिंसा के सिद्धांत की सम्यक विवेचना प्रस्तुत करती है। अहिंसा का तात्पर्य यह नहीं है कि किसी शत्रु के द्वारा अपने जान-माल की हानि होने पर भी व्यक्ति चुपचाप तमाशा देखता रहे। अहिंसा का तात्पर्य है-अकारण हिंसा न करना। यदि अपने प्राण और सम्मान की रक्षा के लिए किसी की हिंसा (हत्या) करनी पड़े, तो वह हिंसा नहीं है। बल्कि इस प्रकार की हिंसा भी अहिंसा की श्रेणी में ही आती है।

(ग) 'फादर चकलाकल'

'फादर चकलाकल' कहानी 'मैं' शैली (आत्मकथात्मक शैली) में लिखी गई है, लेकिन इस कहानी का नायक 'मैं' नहीं है। बल्कि 'मैं' (लेखक) कहानी का एक गौण पात्र है, जिसे उप-नायक भी नहीं कहा जा सकता है। कहानी का नायक फॉदर चकलाकल के.आर. मिशन बेतिया का एक कार्यकर्ता था, जिसका सर्विस एरिया रतनपुरवा था। पचास वर्ष का फॉदर चकलाकल साइकिल से 95 किलोमीटर की दूरी तय करके अपना मिशनरी कार्य किया करता था। लेखक बुद्ध शरण 'हंस' जी ने फॉदर चकलाकल के कार्यों को निकट से देखना उचित समझा, इसलिए एक दिन वे रतनपुरवा मिशन फार्म पर गये। वहाँ फॉदर चकलाकल का आश्रम था, जिसमें क्षेत्र के स्त्री-पुरुषों को शिक्षित किया जाता था। 'हंस' जी के शब्दों में, ''आश्रम के पास बाँस, खर की सुंदर झोपड़ी बनी थी, जिसमें पचास-साठ स्त्री-पुरुष बैठे पढ़-लिख रहे थे। यह था - 'जागृति स्कूल'। फादर चकलाकल ने सभी लोगों से मेरा परिचय कराया। ये रतनपुरवा गाँव के लोग थे। मैंने उपस्थित स्त्री-पुरुष से कुछ पूछा। जो कुछ जानकारी मिली, वह मेरी कल्पना से बाहर की बात थी। रतनपुरवा गाँव में सभी टोलों को मिलाकर सौ परिवार रहते हैं। पास में स्कूल नहीं है। एक भी स्त्री-पुरुष बच्चे-बच्चियाँ यहाँ शिक्षित नहीं थे। फादर चकलाकल ने इसी झोपड़ी में स्त्री-पुरुष सबको शिक्षित किया है। आज गाँव की साठ वर्ष की बूढ़ी भी अपना दस्तखत करती हैं। ... लोगों ने यह भी बताया कि गाँव में प्रत्येक काम के लिए सेना बनी हुई है। जैसे - शिक्षा सेना, सफाई सेना, रोजगार सेना, उत्पादन सेना, सुरक्षा सेना, स्वास्थ्य सेना आदि। सभी सेना के अलग-अलग कमांडर हैं । पुरुष भिन्न-भिन्न सेना के सिपाही हैं।''18, एक दिन फॉदर चकलाकल लेखक के पास आया और बताया कि बगहा में करीब एक हजार बंधुआ मजदूर हैं। उन बंधुआ मजदूरों की मुक्ति के लिए फॉदर चकलाकल ने प्रशासन से लेकर सरकार तक बहुत दौड़-धूप की थी, जिसका मुकद्दमा उच्चतम न्यायालय में चल रहा था। उसने कहा, ''ये ब्राह्मण, लोगों को अछूत बनाए हुये हैं, पिछड़े बनाये हुये हैं, अशिक्षित-गँवार बनाये हुये हैं, अंधविश्वासी-अंधभक्त बनाये हुए हैं। ये जनता को दबाकर रखे हुये हैं। इनकी दादागिरी आम जनता के सीधेपन पर चलती है। हम लोग आम जनता को शिक्षित करते हैं, उन्हें समानता, भाईचारा की शिक्षा देते हैं। उन्हें जागरुक करते हैं, उन्हें रोजगार सिखाते हैं। यही इनकी चिढ़ है। ये कहते हैं, हम सबको ईसाई बनाते हैं। आपने तो आश्रम के पास रतनपुरवा गाँव में बहुत से लोगों को देखा, किसी को ईसाई पाया। वे कल भी हिंदू नहीं थे, आज भी हिंदू नहीं हैं । वे कल भी था : आदिवासी थे, आज भी था : आदिवासी हैं। कल वे सोए थे, आज जागे हुये हैं। ''यह सुनकर 'हंस' जी को फॉदर चकलाकल में सच्चे आंबेडकरवादी मिशनरी के गुणों का अनुभव हुआ। 'हंस' जी के शब्दों में, ''मुझे फादर चकलाकल की बातें सुनकर अनुभव हुआ कि ये व्यक्ति भले क्रिश्चियन मिशनरी हैं, किंतु यह बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर की विचारधारा के कार्यपालक एजेंट हैं। बाबा साहेब ने यही तो कहा था - शिक्षित करो, संघर्ष करो, संगठित करो। पूरे बगहा की अशिक्षित जनता को शिक्षित करने में ये लगे हुये हैं। सबको जीने के लिए संघर्ष करना सिखा रहे हैं। अपनी प्रगति, सुरक्षा, सम्मान के लिए सबको संगठित कर रहे हैं। बाबा साहेब आंबेडकर के अनुयायी इन सब कार्यों का तोता-पाठ करते हैं, मगर करते नहीं है। वे

बहुत बड़ी गलती कर रहे हैं।''19, बुद्ध शरण 'हंस' जी की यह कहानी आंबेडकरवादियों को आंदोलन के सही दिशा का ज्ञान कराती है। यह कहानी इस झूठ से भी पर्दा उठाती है कि ईसाई मिशनरी वंचित-वर्ग के लोगों और आदिवासियों को ईसाई बनाने के लिए ही उनके बीच में जाते हैं।

(घ) 'गीदड़म्'

'गीदड़म्' कहानी में यमुना और जगदीप दो जागरूक नवयुवक अपने गाँव में संघर्ष-मोर्चा चलाते थे। दोनों नवयुवकों ने श्समता सैनिक दलश के कैडर में एक-दो बार भाग लिया था। 'बामसेफ' की एक-दो बैठकों में भी उन दोनों ने भाग लिया था। वर्तमान में वे महामना ज्योतिराव फुले और डॉ. आंबेडकर की विचारधारा में तल्लीन थे। एक दिन उन दोनों ने बाजार की ओर जाते हुए अपने गाँव के जुगल यादव, उसकी पत्नी और उसकी पुत्री को बदहवास हालत में देखा। पूछने पर मालूम हुआ कि जुगल यादव की पुत्री मुनिया घर में अकेली थी, बिल्टू सिंह और फेंकू सिंह दो मनचलों ने एकांत पाकर दिन में ही घर में घुसकर मुनिया के साथ बलात्कार कर दिया था। जगदीप और यमुना जानते थे कि केस-मुकद्दमा करने से कोई लाभ होने वाला नहीं था। दोनों को पता था कि महिला कैदियों के साथ थाने में आये-दिन बलात्कार होता रहता है। उन्हें संदेह था कि बिलटू और फेंकू ने थाने में पहुँचकर दरोगा को रुपये थमा दिये होंगे, इसलिए न्याय की उम्मीद नहीं है। जगदीप और यमुना ने अपने संघर्ष-मोर्चा के सदस्यों की बैठक बुलायी। एक नवयुवक ने पूछा, ''मामला क्या है, यह तो बताइए?'' तो यमुना ने कहा, ''युगल यादव की बच्ची मुनिया को बिलटू और फेंकू ने दिन-दृष्टि बलात्कार किया है और दोनों कुत्ते थाना-पुलिस से मिलकर हीरो बनकर गाँव में घूम रहे हैं।'' यह सुनकर एक नवयुवक ने कहा, ''क्यों नहीं बिलटुआ और फेंकुआ दोनों की बहन का बलात्कार कर दो? बोलो, तो कल ही घर में घुसकर बलात्कार कर देते हैं। जैसे को तैसा जवाब दे दो।'' जगदीप ने नवयुवकों को समझाया कि किसी की भी माँ-बहन को अपनी माँ-बहन की प्रतिष्ठा देना हमारा आदर्श है। अंततः विचार-विमर्श करने के बाद एक नवयुवक ने कहा, ''तब कर दोगे गीदड़म्।'' जमुना ने आश्चर्य के साथ पूछा, ''मतलब?'' तो उस नवयुवक ने कहा, ''दौड़ा कर मार दो उन सालों को, गीदड़ की तरह।''20, इस प्रकार उसने गीदड़म् का अर्थ स्पष्ट किया। इस नये शब्द की खोज पर उसे भी प्रसन्नता हुई। सबने उस प्रतीक शब्द को स्वीकार किया। गीदड़ का जवाब 'गीदड़म्'। जब यमुना ने पूछा, ''कौन करेगा गीदड़म्?'' तो सब सोचने लगे। अंत में यमुना ने ही योजना बनाया। उसने कहा, ''जिसको जहाँ मौका मिले, वहीं कर दो। किंतु सावधान! होशियारी से। आवेश में नहीं, शांति से । किसी को न पता चले और न कोई पहचान में आवे।''21, दूसरे ही दिन गाँव में शोर मच गया कि बिलटू सिंह और फेंकू सिंह मारे गये। इस प्रकार 'गीदड़म्' कहानी में भी बुद्ध शरण 'हंस' जी ने 'अहिंसा परमो धम्म' कहानी की भाँति ही आवश्यक-हिंसा को उचित ठहराया है। इस कहानी का सार यही है कि अपराधी को दंड अवश्य मिलना चाहिए। यदि न्यायालय से न्याय न मिले, तो वंचितों को न्याय के लिए स्वयं नीति बनानी चाहिए।

(ड़) 'हलबंदी'

'हलबंदी' कहानी में बुद्ध शरण 'हंस' जी ने एक नये शब्द 'भूराबाल' का प्रयोग किया है, जिससे भूमिहार, राजपूत, ब्राह्मण और लाला आदि का सामूहिक-बोध होता है। 'हंस' जी के शब्दों में, ''बिहार में 'भूराबाल' प्रतिक्रिया में निकला हुआ शब्द है। चमार, दुकान, मुशहर के लिए जैसे 'अछूत' या 'दलित' शब्द है। कोइरी, यादव, कहार, कुर्मी के लिए जैसे 'बैकवर्ड' शब्द है। उसी तरह दलितों और पिछड़ों ने भूमिहार, राजदूत, ब्राह्मण, लाला यानी कायस्थों के लिए 'भूराबाल' शब्द की ईजाद की है।''22, इस कहानी में मजदूरी (पारिश्रमिक) के सवाल को उठाया गया है। वंचित-वर्ग के लोगों को तथाकथित ऊँची जाति के हिंदुओं द्वारा उचित मजदूरी नहीं दी जाती है। कहानी में रहमतपुर गाँव है और रविदास नगर टोला है। गाँव में किसान रहते थे और टोले में मजदूर। एक तरफ किसानों की बैठक में भिखारी पांडे मजदूर वंचितों के विरुद्ध श्फूट डालो-राज करोश की नीति बता रहा था, तो दूसरी तरफ मजदूरों की बैठक में मजदूरी बढ़ाने की माँग पर विचार-विमर्श किया जा रहा था। इधर रहमतपुर में यज्ञ किया जा रहा था, जिसमें चमारों को छोड़कर अन्य अछूतों को बुलाया गया था, ताकि उनको आपस में लड़ाया जा सके। उधर रविदास नगर में लोगों को जागरूक और शिक्षित बनाने का कार्यक्रम हो रहा था। 'हंस' जी के शब्दों में, ''उधर रविदास नगर में 'जय भीम' स्कूल में पढ़ाई हो रही थी। दो-चार बेरोजगार नवयुवक शिक्षक बने पढ़ा रहे थे। दरअसल, ये शिक्षक कम, दलित सेना, भीम सेना, समता सैनिक दल, बी.एस.पी. के कार्यकर्ता ज्यादा थे। ये राजनीतिक स्तर पर विभक्त थे, किंतु समाज-निर्माण में सब के सब एक थे। बड़ी सुखद बात थी कि समाज-निर्माण के स्तर पर ये राजनीति को घुसने नहीं देते थे।''23, इधर रहमतपुर के कथित सवर्णों ने प्रस्ताव पास किया कि रविदास नगर के लोगों के पशु उनके खेतों में घास नहीं चरें। यदि ऐसा हुआ, तो उन्हें पचास रुपये प्रति जानवर जुर्माना देना होगा। रविदास नगर के लोगों ने प्रस्ताव

स्वीकार करते हुए कहा कि रहमतपुर का कोई व्यक्ति यदि अपने मरे हुये पशुओं को उठा फेंकने के लिए रविदास नगर में किसी को बुलाने आया, तो उसे एक हजार रुपये जुर्माना लगेगा। इस प्रस्ताव से रहमतपुर के बाबू बेचौन हो गये। उन्होंने प्रस्ताव पास किया कि रविदास नगर के लोगों को अपने खेतों में घास काटने नहीं देंगे। रविदास नगर के लोगों को इसी अवसर की तलाश थी। उन लोगों ने प्रस्ताव पास किया कि वे लोग उनके खेतों में इस वर्ष हल नहीं जोतेंगे और घोषणा कर दी-'हलबंदी'। हलबंदी होने के बाद रहमतपुर के पिछड़े-वर्ग के लोगों को कथित सवर्णों की स्वार्थनीति का अनुभव हो गया। अंत में, रहमतपुर के पिछड़े-वर्ग के लोगों ने रविदास नगर के वंचितों के साथ समझौता कर लिया और वे रविदास नगर के मजदूरों को पचास रुपये प्रतिदिन मजदूरी स्वीकार कर लिये।

(च)'जानवर जी'

'जानवर जी' कहानी में बुद्ध शरण श्हंसश जी ने मनुष्य की पशु-प्रवृत्ति की ओर संकेत किया है। इस कहानी में भैंस, साँड, हाथी, घोड़ा, गाय, बैल, हिरण, गीदड़ आदि जानवर-पात्र हैं, जो आपस में वार्तालाप करते हैं। सभी जानवरों ने अपने तर्क से मनुष्य को जानवर सिद्ध कर दिया है। गर्मी का दिन था। धूप तेज थी। पति-पत्नी छाता लगाये कहीं जा रहे थे। अचानक पत्नी की साड़ी में कुछ व्यवधान हुआ और वह लुढककर गिर गयी। छाता पत्नी के हाथ में था। झटके में छाता की कमानी से पति का कान नुच गया। पति ने कहा, ''अंधी हो क्या? जानवर जैसा क्यों चलती हो? उठो। देखो, कमानी से मेरा कान नुच गया।'' पास में बरगद की छाया में कुछ जानवर मित्रवत बैठे थे। पति की बात सुनकर सभी जानवरों को बुरा लगा। सभी ने अपने आप को मनुष्यों से बेहतर प्रमाणित किया। कुछ जानवरों के महत्वपूर्ण संवाद प्रस्तुत हैं। भैंस ने साँड से पूछा, ''सुना मोटू! यह आदमी क्या कह दिया? तुम्हारा शरीर तो भारी-भरकम है, क्या तुम इस औरत की तरह कभी लुढककर गिरे हो?'' तो साँड ने कहा, ''हम न कभी इस तरह से लुढके हैं, न गिरे हैं। हो सकता है लपेटा कभी गिरा हो, क्योंकि हम पशुओं में सबसे अधिक मोटा तो यही है।'' लपेटा हाथी पत्ते चबा रहा था। उसने रूखेपन से कहा, ''यह गिरना, लुढ़कना मनुष्यों की कमजोरी है। हम पशु न गिरते हैं, ना लुढकते हैं। आदमी बदजात होता है, बात-बात में अपना दोष जानवरों पर मढ़ देता है।''24, 'हंस' जी एक आंबेडकरवादी मिशनरी लेखक हैं। उन्होंने कोई भी कहानी निरुद्देश्य नहीं लिखी है। इस कहानी में भी उन्होंने जानवरों के माध्यम से मिशन की बातों का उल्लेख कर दिया है। जब गाय और बकरी दोनों ने एक साथ कहा, ''हम लोग तो मनुष्य का कुछ भी नहीं बिगड़ते हैं। फिर भी ये कसाई हमारे पूरे खानदान को मजे से पीढ़ियों से खाते-चबाते आ रहे हैं।'' तो घोड़े ने लंबा भाषण दिया, ''सुधुआ का मुँह कुत्ता चाटे। यह कहावत सुनी हो न! अपनी सींग, खुर को आक्रामक बनाओ। झटके से अपनी सींग से मनुष्य की आँख में, पेट में मारना सीखो। तब यह बेईमान मनुष्य तुम्हें मारने से डरेगा, हिचकेगा। शेर को मनुष्य क्यों नहीं खाता है? क्योंकि उसे डर है कि कहीं शेर ही उल्टे उसे न खा जाए। मनुष्यों में पैदा हुआ डॉ. बाबा साहेब आंबेडकर ने तो साफ कहा है, बलि बकरे की दी जाती है, शेरों की नहीं। बाबा साहेब की बात को जानने और मानने का प्रयास तो करो। देख नहीं रही हो, बाबा साहेब आंबेडकर के बताये रास्ते पर नहीं चलकर शूद्र, अछूत किस तरह ब्राह्मणवाद की चक्की में पीसे जा रहे हैं। यदि आज शूद्र, अछूत ब्राह्मणों का जाल-फंदा तोड़कर बाबा साहेब के रास्ते पर चलने लगें, तो वे कल से सुखपूर्वक, सम्मानपूर्वक जीवन जी सकते हैं।''25, इस प्रकार इस कहानी में श्हंसश जी ने भारतीय समाज में व्याप्त ऊँच-नीच, भेदभाव, छुआछूत के कारण मनुष्यों को जानवर की श्रेणी में रखा है। जो छुआछूत और ऊँच-नीच का व्यवहार करते हैं, वे भी जानवर है और जो ऐसे व्यवहार को चुपचाप सहते हैं, वे भी जानवर हैं।

(छ)'गौ ब्राह्मण नमो-नमो'

'गौ ब्राह्मण नमो-नमो' कहानी में ब्राह्मण नशेबाज हैं और चमार, दुसाध व्यवसायी हैं। इस परिवर्तन का श्रेय बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर के भाषण को दिया गया है। जगत रविदास और सुमन पासवान के बीच चमारों द्वारा मरे पशु को उठाने, फेंकने, चीरने का गंदा काम छोड़ने की बातें हो रही थी। दोनों बहुत पहले कोलकाता गये थे। कोलकाता में उन्होंने बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर का भाषण सुना था। जगत रविदास ने कहा, ''सुमन भाई! याद है, कोलकाता के पार्क स्ट्रीट में योगेंद्र दा ने बाबा साहेब आंबेडकर को मुंबई से भाषण देने के लिए बुलाया था। ... बाबा साहेब आंबेडकर ने कितना समझाकर हम अछूतों से कहा था - आप लोग अपने बच्चों को पढ़ने क्यों नहीं भेजते हो? देखो आपके गाँव का ब्राह्मण चाहे कितना भी गरीब हो, अपने लड़के को पढ़ाता है। पहले स्कूल में पढ़ाता है, फिर कॉलेज में, इसके बाद युनिवर्सिटी में। कुछ दिन के बाद ब्राह्मण का लड़का डिप्टी-कलेक्टर बन जाता है। तुम भी ऐसा क्यों नहीं करते?'' सुमन पासवान ने कहा, ''सच कहा जगत भाई! बाबा साहेब आंबेडकर की बात से ही पासवान समाज में ऐसा परिवर्तन हुआ, जो आज तक वरदान साबित हुआ है। उस भाषण में उन्होंने यह भी कहा था कि-'मृत पशु खाना छोड़ दो।' लोग पूछते हैं कि फिर अछूत क्या खाएँगे? उत्तर में मैं

एक सदाचारी महिला का उदाहरण देता हूँ। यदि उस पर दुर्दिन भी आ जाए, तो भी वह वेश्या का जीवन गुजारने को तैयार नहीं होगी। वह मर्यादा के लिए दु:ख झेलती है। इस संसार में सम्मान से रहना सीखो। आपके मन में इस संसार में कुछ कर दिखाने की अभिलाषा होनी चाहिए। वही लोग उन्नति करते हैं, जो संघर्ष करते हैं।''26, चमार और दुसाध समुदाय के दोनों जागरूक युवकों जगत और सुमन की अपने परिवार, समाज और जीवन के बारे में इतनी उत्कृष्ट सोच थी, जबकि दो कथित ब्राह्मणों शराबी बंडू और बंडा की सोच बहुत ही निदृष्ट थी। वे दोनों शराब पीने के लिए एक मरी गाय का चमड़ा उतारने के लिए तैयार हो गये। बंडा को मरी गाय निकट से देखकर मिचली आ रही थी। बंडू ने कहा, ''महीने भर में चिखने (मसालेदार नाश्ता) के साथ दारु पियोगे, तो इसका लाभ समझ में आएगा। यह मरी हुई गाय नहीं है बंडा, हजार रुपए का नोट है नोट।'' बंडा ने पूछा, ''मतलब।'' तो बंडू ने कहा, ''हम लोग इसका चमड़ा उतारकर बेच लें। हजार रुपये के लिए हमें अपनी जोरुओं को कितनों के हाथों, कितनी रात बेचना पड़ेगा। अंधेरी रात है, कोई देखेगा भी नहीं, जानेगा भी नहीं। झट से चमड़ा उतारेंगे, पट से बेचेंगे। जाकर गंगा-स्नान कर लेंगे, गाय का गोबर खा लेंगे, सूर्य को प्रणाम करेंगे। पुराना कुआँ पाँच बार और ब्रह्म बाबा (पीपल का वृक्ष) की दस बार परिक्रमा कर लेंगे ।नया जनेऊ बदल लेंगे। चमड़ा बाजार में, रुपये पॉकिट में । सब तरह का पाप हवा में।''27, बुद्ध शरण 'हंस' जी की यह कहानी वर्तमान समाज का छायाचित्र है। वर्तमान में वंचित-वर्ग के लोग आर्थिक, शैक्षिक और सामाजिक रूप से अपने आपको विकसित कर रहे हैं तथा सदाचार की विशेषताओं को भी हृदयंगम कर रहे हैं। जबकि तथाकथित पवित्र सवर्ण लोग पतन की ओर जा रहे हैं और चारित्रिक रूप से अधम हो रहे हैं। इस कहानी में जगत और सुमन गंदे पेशे को छोड़कर व्यवसायी बन गये थे, जबकि कथित ब्राह्मण बंडू और बंडा दोनों शराब के आदी थे तथा शराब के लिए वे अपनी पत्नियों को भी गैर-मर्दों के साथ बेच देते थे। शराब की आदत ने ही बंडू और बंडा से गाय का चमड़ा उतारने जैसा गंदा काम भी कराया।

(ज) 'दो पैसे का भाईचारा'

'दो पैसे का भाईचारा' कहानी में बुद्ध शरण 'हंस' जी ने हिंदू मानसिकता वाले लोगों द्वारा चुनाव के समय किये जाने वाले समता और बंधुत्व के ढोंग को उजागर किया है। चमरू चतुर्वेदी, भिखारी मिसिर और गुप्ता ने मिलकर वंचित-वर्ग के लोगों का वोट (मत) प्राप्त करने के लिए उनकी बस्ती में सहभोज कराने की योजना बनाया। जीप में दाल, चावल, आलू, टमाटर, बैंगन, घी, अचार, पापड़ सब कुछ लादकर वे बस्ती में पहुँच गये। जब वे सारा सामान बौद्ध-विहार के मैदान में उतरवाने लगे, तो उस बस्ती के नेता पेंटर ने उन्हें रोका और बस्ती के लोगों की आपस में सलाह करने के लिए समय माँगा। बस्ती के बुद्धिजीवी लोग बौद्ध-विहार में जाकर आपस में विचार-विमर्श किये। लौटते समय मास्टर जी ने गुप्ता से सहभोज का उद्देश्य पूछा। गुप्ता ने कहा, ''भाई, राय तो हम सबने मिलकर की है। जहाँ तक इस सहभोज के उद्देश्य का सवाल है, वह हम सब का आपसी भाईचारा है। हम लोग सहभोज के द्वारा अपनी एकता व भाईचारा का परिचय देना चाहते हैं। हम लोग छुआछूत, ऊँच-नीच का भेद मिटाना चाहते हैं। हम बाबा साहेब आंबेडकर के सपनों के समाज का निर्माण करना चाहते हैं।'' यह सुनकर पेंटर ने कहा, ''बात तो आपने ठीक कही है गुप्ता जी। छुआछूत और भेदभाव की समस्या न हमारे घर में है, न समाज में। यह समस्या तो आप सवर्णों, ब्राह्मणों के घर-आँगन में है। इसीलिए हम लोगों की राय हुई है कि यह सहभोज आपके घर में हो।''28, गुप्ता ने कहा, ष्बात तो एक ही है। खाना यहाँ बने या वहाँ। लेकिन हम लोग तो गरीबों के साथ बैठकर खाने और खिलाने में ही सहभोज समझते हैं। गरीब भाइयों के बीच बैठकर खाना क्या सहभोज नहीं हुआ'' तो मास्टर जी ने कहा, ष खाना आपके रसोईघर में बने । हमारी माँ-बहनें आपके रसोईघर में खाना बनाएँगी। हमारे घर की स्त्रियाँ आपके घर-आँगन में बैठकर खाना खाएँगी। फिर हम लोग भी आपके साथ आपके आँगन में बैठकर जी भरकर खा लेंगे ।इससे बढ़कर प्रेम, भाईचारा और क्या हो सकता है?'' जब भिखारी मिसिर ने कहा, ''हम लोग तो बराबर गरीबों के मुहल्ले में सहभोज करते आये हैं। लोगों ने प्रेम से बनाया और सबने प्रेम से खाया। इस वर्ष सहभोज यहाँ हो जाए। अगले वर्ष जैसा सोचा जाएगा, वैसा ही होगा।'' यह सुनकर मास्टर जी ने कहा, ''आप लोग सहभोज नहीं, सहभोज का प्रदर्शन करते हैं। छुआछूत मिटाने का आप लोग ढोंग करते हैं। साल भर में एक-दो दिन खिचड़ी खिलाकर आप लोग अपना वोट बैंक मजबूत करते हैं। अगर ये बातें सच नहीं हैं, तो हम लोगों ने जैसा निर्णय लिया है, उसी तरीके से सहभोज हो। हम लोग तो सहभोज खाने के लिए भी तैयार हैं और खिलाने के लिए भी। अंतर सिर्फ आँगन का है। बराबर यह ड्रामा हमारे आँगन में हुआ है। हम लोग इस वर्ष आपके आँगन में यह ड्रामा करना चाहते हैं।''29, यह कहानी उस राजनैतिक यथार्थ की ओर इंगित करती है कि कथित सवर्ण, वंचितों की बस्ती में यदि सहभोज कराते हैं, तो उनमें समता की भावना नहीं होती है, बल्कि समरसता की भावना होती है।

इसलिए वंचितों को उनके सहभोज के प्रदर्शन पर मुग्ध नहीं होना चाहिए और न ही उन्हें अपना हितैषी समझकर अपना बहुमूल्य मत (वोट) देना चाहिए।

(झ) 'प्राण-प्रतिष्ठा'

'प्राण-प्रतिष्ठा' कहानी में 'हंस' जी ने पत्थर की मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा करने के पाखंड की सत्यता को प्रकाशित किया है तथा इस मिथ्या कर्मकांड के प्रति लोगों का जो अंधविश्वास है, उससे उन्हें मुक्त होने के लिए प्रेरित किया है। इस कहानी में चमरू चतुर्वेदी ने अपनी धूर्त-विद्या से रणधीर यादव को बहलाकर, उसे शिव-भक्ति में लगा दिया। रणधीर गाँव के मनचले लड़कों को इकट्ठा करके शिव मंदिर निर्माण समितिश बनवाया, रसीदें छपवाया और चंदा माँगना शुरू कर दिया। महीने भर में पर्याप्त रुपया इकट्ठा हो गया। सारा रूपया चमरू चतुर्वेदी के पास रखा गया था। प्राण प्रतिष्ठा समारोह का आयोजन किया गया। खीर-पूरी, मिठाई, फल आदि की व्यवस्था हो गयी थी। गाँव भर की स्त्रियाँ मंदिर की परिक्रमा कर रही थीं। अखंड-कीर्तन हो रहा था। मंदिर पवित्र हो चुका था। देव-मूर्तियों में प्राण-प्रतिष्ठा हो चुकी थी। तभी चमरू चतुर्वेदी का नौकर आकर उसे बताया कि उसके लड़के बबलू को साँप ने काट लिया है, वह बेहोश है। बबलू, चमरू चतुर्वेदी का इकलौता बेटा था, जो इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहा था। चमरू रोता-चिल्लाता अपने घर की ओर भागा। बबलू मर चुका था। चमरू का नौकर सिद्धू अनपढ़-गँवार था। वह बबलू का बहुत प्यारा था और बबलू उसे प्यारा था। इसलिए सिद्धू ने चमरू से कहा, ''मालिक! बबुआ में प्राण-प्रतिष्ठा कर दीजिए। मत गाड़िए, मत जलाइए।''30, लोगों को आश्चर्य तो हुआ, लेकिन उन्हें लगा कि सिद्धू सच बोलता है। निर्जीव कंकड़-पत्थर की मूर्ति में चमरू ने रात में प्राण भरा था, मंदिर पवित्र किया था। अब उस मंदिर में अछूत नहीं जा सकता था, क्योंकि वहाँ जीवित भगवान विराजमान था और मंदिर पवित्र था। लोग इसी भ्रम में थे। लेकिन चमरू चतुर्वेदी भलीभाँति जानता था कि सत्य क्या है? चमरू ने कातर दृष्टि से भोले-भाले सिद्धू को देखा। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। उसने मन ही मन में सोचा, ''किसी चीज को पवित्र करना मेरे वश की बात नहीं। किसी चीज में प्राण-प्रतिष्ठा करना मेरे वश की बात नहीं। ... अपने स्वार्थ के लिए मैं सब को ठग सकता हूँ, किंतु अपने आपको, बिलखते-चीखते अपने कुल-परिवार को, अपने मृत इकलौते पुत्र को कैसे ठगूँ। मैं रोज-रोज किसी न किसी को ठगता था। आज मैं खुद ठगा गया। मैं हिंदुओं को ठगता था, लूटता था। समय ने, काल ने मुझे ठग लिया, लूट लिया।''31, 'हंस' जी की यह कहानी तथागत बुद्ध के इस कथन का समर्थन करती है कि 'जैसा बोओगे, वैसा ही काटोगे।' कहा भी जाता है-जैसी करनी, वैसी भरनी। जो व्यक्ति दूसरे को धोखा देता है, वह भी कभी न कभी अवश्य धोखा खाता है।

(ट) 'मिशनरी हूँ'

'मिशनरी हूँ' कहानी में बुद्ध शरण 'हंस' जी ने स्वयं के द्वारा स्थापित 'आंबेडकर मिशन प्रकाशन' पटना के मिशनरी वितरक (डिस्ट्रीब्यूटर) के अनुभव को अभिव्यक्त किया है। मिशनरी एक सज्जन के घर गया। अभिवादन में वह उन्हें 'जय भीम सर' कहा, लेकिन उस सज्जन ने अभिवादन के प्रत्युत्तर में प्रश्न किया - 'क्या बात है?' जबकि वे सज्जन स्वयं बहुजन समाज से थे, जिस समाज के उद्धार के लिए बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर ने अपना जीवन समर्पित कर दिया था। मिशनरी ने उन्हें डॉ. डी.आर. जाटव के द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'डॉ. आंबेडकर का सामाजिक दर्शन, राजनीतिक दर्शन', मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा 'अपने-अपने पिंजरे' और डॉ. कुसुम वियोगी की कहानी 'चार इंच की कलम' दिखाया। उस सज्जन ने मिशनरी से उसका परिचय पूछा, तो उसने अपना नाम श्सलीमश और शिक्षा बी.ए. आनर्स बताया। यह जानकर सज्जन ने कहा, ''पासवान के फेरा में पड़कर अपना जीवन क्यों बर्बाद कर रहे हो?'' मिशनरी युवक ने बुद्ध शरण 'हंस' जी के सत्कर्म की प्रशंसा करते हुए उनके द्वारा दिये गये सम्मान और सहारा हेतु उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त किया। जब मिशनरी युवक ने बाबा साहेब की चार पुस्तकों का सेट खरीदने के लिए उस सज्जन से आग्रह किया, तो सज्जन ने कहा, ''मुझे अब ये सब पढ़ने की फुर्सत नहीं है। और फिर, जो कुछ इन पुस्तकों में है, वह सब कुछ तो मैं जानता हूँ।''32, मिशनरी युवक ने कहा, ''सर! मैं इन्हीं पुस्तकों को बेचकर अपना अध्ययन कायम किये हुये हूँ। आप कुछ किताबें ले लेंगे, मुझे सहारा मिल जाएगा और फिर, सर! आपको क्या कमी है। मैं तो बहुत उम्मीद लेकर आपके पास आया हूँ।'' सज्जन ने एक सस्ती वाली पुस्तक 'चार इंच की कलम' ली, जिसका मूल्य था-पंद्रह रुपये। उसमें भी पाँच रुपये कम कराया और मात्र दस रुपये दिया। जबकि वे सज्जन अपने कुत्ते को एक मास्टर से ट्रेनिंग दिलवा रहे थे और पूरे कोर्स का खर्च दो हजार रुपये था। कुत्ते के लिए हड्डी, दूध और बिस्कुट का कुल खर्च सात-आठ सौ रुपये महीना पड़ जाता था। जो मास्टर कुत्ते को ट्रेनिंग देता था, वह एक पुरोहित था। बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर के प्रति उसकी श्रद्धा थी। उसने डॉ० आंबेडकर की चारों पुस्तकें खरीद ली। मिशनरी युवक ने चारों पुस्तकों का मूल्य एक सौ पचासी रुपये बताया और पुरोहित ने

पूरे रुपये दिये। मिशनरी युवक ने उन पुस्तकों के साथ पुरोहित को 'जाति का विनाश' नामक पुस्तक मुफ्त में भेंट किया। लौटते समय जब उस सज्जन ने मिशनरी युवक से कहा कि, ''चाय पीकर जाओ।'' तो उस युवक ने कहा, ''सर! बुरा नहीं मानेंगे। मैं आपके यहाँ चाय नहीं पी सकता। मैं मिशनरी हूँ। जहाँ बाबा साहेब के विचारों का सम्मान नहीं, वह जगह मेरे लिए सम्मान की जगह नहीं। आपको अपने बड़प्पन का ख्याल है और मुझे बाबा साहब के सम्मान का।''33, 'हंस' जी की यह कहानी उस सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करती है कि वंचित-वर्ग का व्यक्ति जब पढ़-लिखकर नौकरी पा जाता है, तो वह सुख-सुविधाओं का भोग करने में ही मस्त रहता है। उसे अपने समाज और मिशन के प्रति लगाव नहीं होता है। जबकि कथित सवर्ण व्यक्ति भले ही पूरी तरह से सुख-सुविधा का आनंद न ले, लेकिन वह अपने समाज और मिशन के लिए समर्पित होता है। यह कहानी आंबेडकरवादी मिशनरी व्यक्ति को यह शिक्षा देती है कि जो व्यक्ति बाबा साहेब के विचारों का सम्मान न करे, उसके घर का चाय-पानी पीना भी व्यर्थ है।

(ठ) 'जय अर्जक'

'जय अर्जक' कहानी अंतर्जातीय विवाह की पक्षधर कहानी है। शक्ति सिंह यादव और कामता प्रसाद कुशवाहा दोनों घनिष्ठ मित्र तथा 'अर्जक संघ' के सक्रिय कार्यकर्ता थे। एक दिन कामता प्रसाद, शक्ति सिंह के घर गया और अपने पुत्र का विवाह उसकी पुत्री से करने का प्रस्ताव रखा। यह सुनकर शक्ति सिंह के वृद्ध पिता ने कहा, ''बबुआ! हम आइसन न कभी सुनली, न देखली। आपस में संघ, सभा चाहे जे करीं, लेकिन शादी-ब्याह तो जात में ही होवे के चाही।'' शक्ति सिंह के भाई ने कहा, ''यादव-कोइरी में कभी कहीं विवाह हुआ है, जो आज आप बोल रहे हैं? आप अपनी लड़की की शादी गैर-जाति में करिएगा? कामता प्रसाद ने उत्तर दिया, ''भाई साहब! मेरी बच्ची भी शादी योग्य है । इस वर्ष बी.ए. ऑनर्स से पास की है। यदि इसी घर में सुयोग्य लड़का हो, तो यहीं बात पक्की कीजिए। इसमें तो मुझे ज्यादा प्रसन्नता होगी।''34, शक्ति सिंह, उसके भाई भक्ति सिंह और उसके पिता अंतर्जातीय विवाह करने के लिए तैयार नहीं हो रहे थे। वे सब पारंपरिक सोच से मुक्त होने में असमर्थ थे। लेकिन तभी शक्ति सिंह की माँ आयीं। वे भले ही वृद्ध और पुराने जमाने की थीं, लेकिन उनके मन में परिवर्तन की लालसा थी। शक्ति सिंह की माँ ने कहा, ''आज दस साल से ई गाँव अर्जक संघ के अड्डा बनल है। तीसरा साल रामस्वरूप वर्मा जी और महाराज सिंह भारती जी अइलन हला। उनकर साथ रघुनीराम शास्त्री जी, बलदेव चौधरी जी, दूधनाथ सिंह जी अइलन हल। वर्मा जी और भारती जी के भाषण पर खूब ताली बजल हल। कौन बात पर ताली बजल हल? बतावा तोहनीन? वर्मा जी हमरा खड़ा करके सैकड़ों लोगन के बीच पूछला हल - 'माई, हमार सपना पूरा होई? सब लोगन के बीच हम अभिमान से कहलीं-बेटा, जरूर पूरा होई। कौन सा सपना पूरा करे खातिर वर्मा जी और भारती जी हम सबके कौल करार करइलन हल? ... क्या अर्जक संघ खाली मीटिंग करे खातिर बनल हई? खाली ताली बजावे खातिर बनल हई? खाली कौल करार करे खातिर बनल हई? तू मरद लोग जिंदगी भर कौन बात के मीटिंग सभा करते रहता है? दू घर में एक बार रामस्वरूप वर्मा जी, महाराज सिंह भारती जी और रघुनीराम शास्त्री जी के भाषण हम मेहरारू लोग सुनलीं। दुबारे ललई सिंह यादव जी अइलन हल, कानपुर वाले। सब एक बात के रट लगवलन - भाई, जाति तोड़ो, जाति तोड़ो। तब जाति तोड़ले से टूटी? कि खाली बोले से?''35, अंततः यादव और कुशवाहा परिवार के बीच वैवाहिक संबंध स्थापित हुआ तथा अर्जक संघ के उद्देश्य की भी पूर्ति हुई। बुद्ध शरण श्हंसश जी ने इस कहानी के द्वारा अर्जक संघ के कार्यकर्ताओं को कथनी और करनी में अंतर न रखने की सीख दी है।

(ड) 'जहर पोथी'

'जहर पोथी' कहानी हिंदू धर्म के सभी धर्म-ग्रंथों को जहर-पोथी सिद्ध करती है। इस कहानी में रसूलपुर गाँव में मानस-कथा का आयोजन किया गया था। अमर बौद्ध नामक युवक भी मानस-कथा के आयोजन-स्थल पर उपस्थित था। लेकिन वह कथा सुनने नहीं गया था, बल्कि कथा सुनाने वाले आचार्य से मानस संबंधी कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न पूछकर ग्रामीणों के मन का भ्रम दूर करने के लिए गया था। कथा प्रारंभ हुई। आचार्य मानस की चौपाइयों का सस्वर पाठ करते और बीच-बीच में कथा कहते। कथा सुनाते-सुनाते आचार्य दीनबंधु ने श्रोताओं से पूछा, ''किन्हीं भक्तों को किसी विषय पर शंका समाधान करना हो, तो करें।'' किशोर नामक युवक की प्रेरणा पाकर अमर ने पूछा, ''अभी आपने रामचरितमानस का अच्छा पाठ किया और कई कथाएँ भी सुनायी। रामचरितमानस में कितने काण्ड हैं?'' आचार्य ने उपहास के लहजे में कहा, ''मानस में सात काण्ड हैं। इतना भी नहीं जानते?'' अमर ने कहा, ''मगर मेरे पास गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित रामचरितमानस है, जिसमें छः काण्ड ही हैं।'' आचार्य ने कहा, ''गलत, ऐसा हो नहीं सकता।'' अमर ने अपने झोले से निकालकर रामचरितमानस आचार्य की ओर बढ़ा दिया। आचार्य ने कहा, ''यह किताब तो 1956ई. की छपी हुई है। नया

रामचरितमानस में सात काण्ड हैं। यह देखो मेरे पास है।'' यह कहते हुए आचार्य ने अपनी किताब दिखायी। तब अमर ने आपत्ति के लहजे में कहा, ''इसका मतलब हिंदू धर्म की किताबों में मनमानी परिवर्तन किया गया है और किया जा भी रहा है। तब तो यह नकली किताब हो गयी?''36, आचार्य उत्तर देने में असमर्थ थे। उन्होंने सामान्य ज्ञान का प्रश्न पूछने की बजाय भक्तिभाव का प्रश्न पूछने के लिए अमर से कहा अमर ने फिर पूछा, ''रामचरितमानस में लिखा है- ''जे वरनाधम तेली, कुम्हारा, स्वपच, किरात, कोल, कलवारा।'' इसका अर्थ समझा दें? ''इस चौपाई का अर्थ बताने में आचार्य दीनबंधु झिझकने लगे। जब एक अधेड़ ग्रामीण ने जवाब देने के लिए आचार्य पर दबाव डाला, तब आचार्य ने कहा, ''वर्णों में यानी हिंदू समाज में तेली, कुम्हार, डोम, कोइरी, कलाल, आदिवासी सबसे नीच हैं, अधम हैं। इस बात को कहने का मतलब बाबा तुलसी ...।'' उसके बाद तो वहाँ पर इकट्ठे श्रोता आक्रोशित हो गये। कथा आयोजक शंकर तेली का भी मिजाज बिगड़ गया। वहाँ पर एक कुम्हार युवक भी उपस्थित था, उसने भी अप्रसन्नता प्रकट की। एक कलवार युवक भी था, वह भी क्रोधित हो गया। आचार्य हक्का-बक्का रह गये। कथा आयोजक किशोर ने कहा, ''बंद करो यह सब ढोंग, प्रवचन। यह रामायण नहीं, जहर-पोथी है।'' अंत में, आचार्य दीनबंधु भाग खड़े हुये। दूसरे दिन सुबह वही वृद्ध ग्रामीण अपने पोते को लेकर स्कूल जा रहा था। पोते ने गाँव के पोखर पर गंदागलीज में बहुत सी किताबों को फटा, फेंका हुआ देखा। उसने उत्सुकता से पूछा, ''दादा! दादा! वह देखो, बहुत सी किताबे किसी ने फेंक दी है, जाकर उठा लें।'' उस वृद्ध ग्रामीण ने कहा, ''मत छूओ। वे सब गंदी किताबें होंगी-जहर पोथी।''37, यह कहते हुए वह वृद्ध व्यक्ति अपने पोते को लेकर स्कूल की ओर चल दिया। इस प्रकार बुद्ध शरण 'हंस' जी ने इस कहानी के माध्यम से यह संदेश दिया है कि जिस धर्म-ग्रंथ में ऊँच-नीच, जाति-पाँति की बातें लिखी गयी हैं, उन्हें पढ़ना और उनका श्रवण करना सर्वथा अनुचित है।

(ढ)'को रक्षति वेदः'

'को रक्षति वेदः' कहानी में बुद्ध शरण 'हंस' जी ने कथित ब्राह्मणों के मुख से यह स्पष्ट किया है कि अन्य पिछड़ा वर्ग के लोग (शूद्र) ही वेदों की रक्षा करते हैं। उन्हीं के बल पर ब्राह्मणवाद और हिंदूवाद टिका हुआ है। कहानी में दुर्जन उपाध्याय संस्कृत का शिक्षक था। उसकी बदली ग्वालपुर गाँव में हुई, जहाँ वह पहली बार गया था। उसमें कई गुण थे, यथा - वह ड्यूटी का पक्का था, संस्कृत का अच्छा जानकार था, पक्का कर्मकांडी था और हिंदू धर्म का वफादार सेवक था। साथ ही वह आर.एस.एस. की शाखा का सक्रिय सदस्य भी था। उपाध्याय ने बच्चों का परिचय लेते समय उनका नाम, वर्ग और जाति सब पूछ लिया। स्कूल में सौ से ऊपर बच्चे थे, लेकिन एक भी ब्राह्मण नहीं था। इसलिए दुर्जन उपाध्याय बहुत चिंता में पड़ गया। एक दिन वह एक कथित ब्राह्मण गृहस्थ के घर गया, जिसका नाम जोखन पांडे था। बातचीत के दौरान दुर्जन ने जोखन के सामने हिंदू धर्म और ब्राह्मणवाद की सुरक्षा के प्रति चिंता व्यक्त की और कथित ब्राह्मणों की एक बैठक कराने के लिए कहा। अगले दिन जोखन पांडे ने अपने समधी दुखी मिसिर सहित भिखारी त्रिवेदी और बटोरन पांडे की बैठक करायी। बैठक में धर्म और समाज पर चर्चा होने लगी। बटोरन पांडे ने स्पष्ट किया कि अन्य पिछड़ा वर्ग यानी शूद्र ही वेदों की रक्षा करते आये हैं। यदि वे जागरूक हो गये, तो हिंदूवाद और ब्राह्मणवाद का बहुत नुकसान होगा। बटोरन पांडे ने आगे कहा, ''अछूतों से हम निश्चिंत हैं। ये न पहले हिंदू थे, न आज हैं। इन बेहूदों के पास है ही क्या? दो-चार प्रतिशत लोग पढ़े-लिखे हैं। जमीन-जायदाद के पहले भी कंगाल थे, आज भी हैं। जो लोग नौकरी-पेशा में हैं, उन्हें शराबी बना दीजिए, किसी बदसूरत औरत को उसके पीछे लटका दीजिए और कथा-पूजा के नाम पर इन्हें मनमाना लूटते रहिए। ये अछूत मार्क्स को पढ़ें या आंबेडकर को, ये अक्ल के अंधे, अंधे ही रहेंगे। इसके बावजूद यदि कोई अछूत गर्दन ताने, सर ऊँचा करे, तब किसी कोइरी, कुर्मी, अहीर, कहार, बनवार से इन्हें लड़ा दीजिए, पिटवा दीजिए या फिनिश ... ।''38, बैठक समाप्त होने की घोषणा करते हुए जोखन पांडे ज्यों ही बोलना चाहा, ''आज की बैठक ... ।'' तभी किसी ने पुकारा, ''जोखन पांडे! ओ जोखन पांडे!'' जोखन पांडे बाहर निकला। बोला, ''अरे कौन हो?'' लड़कों की भीड़ में से एक ने कहा, ष हम लोग जयंती वाले हैं। ज्योतिराव फुले की जयंती का चंदा सिर्फ पाँच रुपये।'' यह कहते हुए उसने पाँच रुपये की रसीद थमा दी। जोखन पांडे कहा, ''कल आकर ले जाना।'' पांडे ने रसीद ली और मुँह लटकाकर अंदर चला गया। दुर्जन उपाध्याय ने अत्यंत दुखी स्वर में पूछा, ''ये लौंडे-छौंडे जोखन पांडे कहता है? पंडित जी नहीं कहता?'' तो जोखन पांडे ने कहा, ''पहले कहता था। अब नहीं कहता। अब किस-किसको लाठी से समझाएँ? पेशवा ब्राह्मण का राज तो है नहीं।''39, बुद्ध शरण श्हंसश जी की यह कहानी तथाकथित ब्राह्मणों द्वारा वंचितों और अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों के प्रति किये जाने वाले छल को उजागर करती है। यह कहानी स्पष्ट संकेत करती है कि वर्तमान में कथित सवर्ण, वंचितों को जागरूक होते देखकर अत्यंत चिंतित हैं।

निष्कर्ष

अतः स्पष्ट है कि बुद्ध शरण 'हंस' जी का संपूर्ण कथा-साहित्य आंबेडकरवादी चेतना और आंदोलन के उद्देश्य से परिपूर्ण है। उन्होंने अपनी कहानियों में वंचित-वर्ग और अन्य पिछड़ा वर्ग के पात्रों का नाम सुंदर और सार्थक रखा है । यथा - ताराकिरण बौद्ध, अमर बौद्ध, जंगबहादुर रविदास, दलजीत पासवान, यमुना, जगदीप, कमल, कामता प्रसाद कुशवाहा, शक्ति सिंह यादव आदि । जबकि उन्होंने कथित सवर्ण पात्रों का नाम विकृत रखा है। यथा-लुच्चा मिसिर, चोकट उपाध्याय, चमरू चतुर्वेदी, शूकर झा, दुर्जन उपाध्याय, बटोरन पांडे, भिखारी त्रिवेदी, रणछोड़ सिंह, बिलटू सिंह, फेकू सिंह आदि। उन्होंने ऐसा इसलिए किया है, क्योंकि हिंदी साहित्य में प्रेमचंद और उनके समकालीन कथित सवर्ण कहानीकारों ने अपनी कहानियों में वंचित-वर्ग के पात्रों का बहुत ही विकृत नाम रखा है। 'हंस' जी यह भली-भाँति जानते हैं कि कहानी के पात्रों के नामों का पाठकों के मन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। 'हंस' जी की भाषा पात्रों के अनुकूल है। उन्होंने शिक्षित पात्रों के लिए शिक्षितों जैसी विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग किया है तथा निरक्षर पात्रों के लिए आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय बोली का प्रयोग किया है। उनकी कहानियों के शिक्षित पात्र बौद्ध-आंबेडकरवादी हैं, जिन्हें सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्रों की अच्छी जानकारी है। 'हंस' जी की कहानियों में विश्लेषणात्मक शैली की प्रधानता है। कथानक, संवाद और भाषा-शैली की दृष्टि से बुद्ध शरण 'हंस' जी इकलौते आंबेडकरवादी कहानीकार हैं, जिनकी कहानियाँ आंबेडकरवादी साहित्य के प्रयोजन को पूर्ण करने में पूरी तरह सफल हैं।

संदर्भ :-

1. हंस, बुद्ध शरण, तीन महाप्राणी, आंबेडकर मिशन पटना, दूसरा संस्करण 2007, पृष्ठ 30
2. वही, पृष्ठ 32
3. वही, पृष्ठ 37
4. वही, पृष्ठ 38
5. वही, पृष्ठ 44
6. वही, पृष्ठ 45
7. वही, पृष्ठ 60
8. वही, पृष्ठ 60-61
9. वही, पृष्ठ 83-84
10. वही, पृष्ठ 85
11. वही, पृष्ठ 93-94
12. वही, पृष्ठ 95
13. वही, पृष्ठ 106
14. वही, पृष्ठ 108
15. वही, पृष्ठ 115
16. हंस, बुद्ध शरण, को रक्षति वेदः, आंबेडकर मिशन पटना, प्रथम संस्करण 2003, पृष्ठ 16-17
17. वही, पृष्ठ 22-23
18. वही, पृष्ठ 28
19. वही, पृष्ठ 31
20. वही, पृष्ठ 48
21. वही, पृष्ठ 50
22. वही, पृष्ठ 53
23. वही, पृष्ठ 60
24. वही, पृष्ठ 65
25. वही, पृष्ठ 66
26. वही, पृष्ठ 77
27. वही, पृष्ठ 86
28. वही, पृष्ठ 91
29. वही, पृष्ठ 92
30. वही, पृष्ठ 104
31. वही, पृष्ठ 106
32. वही, पृष्ठ 110
33. वही, पृष्ठ 111
34. वही, पृष्ठ 121
35. वही, पृष्ठ 123-124
36. वही, पृष्ठ 132
37. वही, पृष्ठ 134
38. वही, पृष्ठ 143
39. वही, पृष्ठ 146

दामोदर मोरे की आंबेडकरवादी कविता में नीले शब्दों की क्रान्ति

- डॉ. रमेश कुमार

शोध सारांश -

यह शोध-पत्र प्रो. दामोदर मोरे की कविताओं में निहित आंबेडकरवादी दृष्टि का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। विशेषत: 'नीले शब्दों की छाया में' काव्य-संकलन के आधार पर कवि के वैचारिक, प्रतीकात्मक और बिंबात्मक संसार का अध्ययन किया गया है। मोरे की कविता में 'नीला' रंग केवल दृश्य तत्व नहीं, बल्कि समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और संवैधानिक चेतना का क्रांतिकारी प्रतीक बनकर उभरता है। 'प्रज्ञा सूर्य', 'करुणा का कमल', 'बोधिवृक्ष', 'नीला आकाश' आदि प्रतीकों के माध्यम से कवि ने डॉ. आंबेडकर की वैचारिकी को सामाजिक परिवर्तन के केंद्र में स्थापित किया है।

कविता में वर्णव्यवस्था, जातिगत उत्पीड़न, धार्मिक पाखंड, सामाजिक विषमता और राजनीतिक अन्याय के विरुद्ध तीखा प्रतिरोध व्यक्त हुआ है। 'अग्नि' और 'भूख' जैसे बिंब दलित जीवन की पीड़ा, आक्रोश और संघर्षशील चेतना को मूर्त करते हैं। कवि सत्ता-सुख भोगने वाले दलित नेतृत्व की आलोचना भी करता है और न्याय-सम्मत सामाजिक पुनर्निर्माण की दिशा में प्रतिबद्धता व्यक्त करता है।

मोरे की कविता अंधकार के विरुद्ध प्रकाश का उद्घोष है। यह कविता करुणा और क्रांति, संवेदना और संघर्ष, प्रज्ञा और परिवर्तन का समन्वित स्वर रचती है। इस प्रकार, प्रो. दामोदर मोरे की काव्य-दृष्टि आंबेडकरवादी चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति के रूप में समकालीन हिंदी कविता को वैचारिक ऊर्जा प्रदान करती है।

बीज शब्द

आंबेडकरवादी दृष्टि, नीला प्रतीक, प्रज्ञा सूर्य, सामाजिक समता, जाति-विरोध, वर्णव्यवस्था, दलित चेतना, संवैधानिक मूल्य, प्रतिरोध की कविता, करुणा और क्रांति।

मूल लेख

दामोदर मोरे बहुआयामी व्यक्तित्व एवं प्रतिभा के धनी हैं। आप आंबेडकरवादी विचारधारा और साहित्य के प्रमुख सृजक एवं अध्येता रहे हैं। आप कवि, कथाकार, समीक्षक, संपादक और दलित साहित्य के विचारक भी हैं। आपकी मराठी, हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं में निरन्तर रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। आपके हिन्दी भाषा में कई काव्य-संकलन प्रकाशित हो चुके हैं जो इस प्रकार हैं-'सदियों के बहते ज़ख्म', 'नीले शब्दों की छाया में', 'पिछला चक्का', 'पलकें सुलग रही है' और 'सदियों के जख्मों के गुनाहगार कौन?' आदि। यहां आलोच्य काव्य-संकलन 'नीले शब्दों की छाया में' का विवेचन करेंगे। कवि दामोदर मोरे ने अपनी कविताओं में इक्कीसवीं सदी के भारतीय समाज की तमाम विसंगतियों और विद्रूपताओं पर तीखा प्रहार किया। उन्होंने नकली कलावाद और अभिजात्यवादी सौंदर्य पर तीखा हमला बोला। उनकी कविता में रूमानी भाव, हवाई कल्पना और कृत्रिम सौंदर्य का चित्रण नहीं है बल्कि दहकते शब्दों की अंगार, मूक आदमियों की दर्दनाक वेदना, भयावह शोषण, अन्याय के खिलाफ खुला विद्रोह, अमानुष सत्ता तथा भ्रष्ट व्यवस्था के प्रति संघर्ष, मनुवादी वर्णश्रम, धार्मिक पाखंड, जातिवादी हिंसा-अराजकता, दलित विरोधी शास्त्रों तथा कुप्रथाओं पर आक्रोश व्यक्त हुआ। एक तरह से जाति, रंग, वर्ण एवं वर्ग के तमाम वैषम्य के प्रति विद्रोह हुआ तथा मनुष्यता और मानवता के प्रति स्वस्थ दृष्टि इसमें व्याप्त रही।

दामोदर मोरे आंबेडकरवादी कविता के संघर्षशील कवि हैं। उनकी कविता में नीले शब्दों का बहुतायत प्रयोग हुआ। 'नीला आसमान', 'प्रज्ञा सूरज', 'नीली सुबह', 'सूरज किरण', 'बादल', 'पेड़-पौधे', 'फूल', 'चिड़िया', 'डायनासोर', 'बंजर भूमि', 'नदिया', 'आग', 'जहर', 'जिन्दा लाश', 'सागर', 'बूंद', 'बर्फ', 'बबूल के कांटे', 'झोपड़ी', 'करुणा', 'कमल', 'अंधेरा', 'प्रकाश', 'अशोक वृक्ष', 'गिद्ध', 'मलमूत्र', 'प्रज्ञासूर्य' आदि शब्दों का प्रयोग प्रतीकात्मक और बिंबात्मक रूप में हुआ। इस संग्रह में कुछ कविताएं लंबी हैं, कुछ दोहे में, कुछ छंदबद्ध और छंदमुक्त भी। उनकी कविता में प्रज्ञा सूर्य की ऊर्जा, प्रेरणा और अदम्य शक्ति का स्रोत दमकता है। नीले आसमान में चमकने वाला प्रज्ञा सूर्य उनकी कविता का महानायक डॉ. बाबा साहेब भीमराव आंबेडकर है। नीले रंग की

ध्वजा ने दलितों को शिक्षित किया, संगठित होकर अन्याय के खिलाफ लड़ना सिखाया और मानव समाज की समता के लिए संघर्ष करना सिखाया। प्रो. दामोदर मोरे ने लिखा- ''इस प्रज्ञा सूर्य ने भारतीय संविधान के माध्यम से ऐसा नीला आसमान हमें उड़ने के लिए दिया है -जहाँ जाति भेद, धर्म भेद, प्रान्त भेद, भाषा भेद का कोई गतिरोधक नहीं है। नीला रंग समानता एवं स्वतंत्रता का प्रतीक है।'' इस प्रकार उनकी कविता में नीले रंग की क्रांतिकारी चेतना व्याप्त है जो अंधकार, अज्ञानता, विषमता, धार्मिक पाखंड, श्रम शोषण, अन्याय और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करती है। सामाजिक समता, आर्थिक न्याय, मानवीय स्वतंत्रता और भ्रातृत्व के मूल्यों को स्थापित करती है।

उनकी लंबी वैचारिक कविताओं में 'हम सूर्यवंशी हैं', 'वे मलमूत्र हैं', 'कहते हैं कि', 'समय', 'रोटी का गान', 'करुणा का कमल' और 'वे सब गूंगे हैं' आदि हैं। उनकी 'हम सूर्यवंशी हैं' वैचारिक कविता है जिसमें दलितों की गहरी संवेदना उभरती है। दलित समाज को कवि ने सूर्यवंशी कहा जो प्रज्ञा सूर्य रूपी डॉ. आंबेडकर के संघर्षशील पुत्र भी हैं तथा प्रज्ञा सूर्य के संघर्ष यात्री भी। कविता में दलितों के अतीत का संताप उभरता है। गाँव तथा समाज के हाशिए पर रहने वाले दलितों को ही पहले सूर्य किरण स्पर्श करती थी। दलितों की लंबी छाया भी सवर्ण बस्ती को छूती थी लेकिन सवर्णों की धार्मिक ऊँच-नीच, पवित्र-अपवित्र, अवर्ण-शूद्र-अति शूद्र की भावना ने उन्हें पशुतुल्य बना दिया। उन्हें गाँव व समाज से बहिष्कृत किया तथा अछूत बनाया। सदियों के दु:ख-दर्द, अज्ञानता का अंधकार और दीनता से मुरझाए उनके चेहरे थे। प्रज्ञा सूर्य के भाषण ने दलितों की परतंत्रता के अंधकार को दूर कर दिया। खुले नीले आकाश तक गूंज उठी थी जय भीम की वाणी। प्रज्ञा सूर्य के कमलमुख ने झूठे धर्मग्रंथों, शास्त्रों की जड़ता, वर्णवादी बेड़ियाँ और परमेश्वर के पाखंड को ध्वस्त कर डाला। मंच पर बाबा साहेब थे। लोग भूखे-नंगे थे जो पेट की भूख को भरने हेतु अपने स्थान से जाने लगे थे- ''गाँव के एक अमीर के घर पर / लोग जा रहे हैं उठकर/ भोजन की पत्तलें उठाने का समय देखकर नहीं तो बचे हुए जूठन अन्न के साथ / फेंक दी जाएगी कचरे के ढेर पर /भोजन की प्रभावी / भूखे पेट भाषण छोड़कर / इसलिए दौड़ रहे हैं उधर / ताकि कुत्ते पहुँचने से पहले जूठन खाने के लिए हम पहुँचे कचरे के ढेर पर।''

वर्णाश्रम की मानव विरोधी व्यवस्था ने दलितों को हीन अवस्था में पहुँचा दिया। प्रज्ञा सूर्य इन दलितों के दु:ख-दर्द से इतने द्रवित हुए थे कि उनके नेत्रों से गंगा-जमुना बह निकली। उनकी 'वे मलमूत्र हैं' लंबी कविता में मानव विरोधी चरित्रों पर व्यंग्य हुआ है। कवि की दृष्टि में मलमूत्र कौन हैं? जो अमानवीयता की बदबू रखते हैं, जो अस्पृश्यता की बदबू रखते हैं, जो जातिवाद की बदबू से भरे हैं, जो सफाई कर्मियों का उत्पीड़न करते हैं, जो गरीबों का गला घोंटते हैं, जो नारी को नरक का द्वार कहते हैं, जो देशभक्ति के नाम पर दलितों पर अत्याचार करते हैं। भारतीय समाज की विडम्बना है कि मनुष्य को पुनर्जन्म, कर्मफल, भाग्य, अंधश्रद्धाओं के आधार पर उसे ऊँच-नीच, पाप-पुण्य, सवर्ण-अवर्ण के भेद में धकेला। कवि ने अतीत के माध्यम से दलित मनुष्यों की वेदना व्यक्त की है। ''मलिन वे होने की अमानवीय प्रथा ने एक समुदाय को जन्म से पतित किया है-मनुष्य होते हुए भी / सदियों से सिर पर ढोते-ढोते / मनुष्य का ही मैला / हीनताबोध की भावना से हमारा निर्मल मनोजल ही / धीरे-धीरे बनता गया मैला।''[3]

सदियाँ गुज़री, लेकिन दलितों का जीवन नहीं बदला। स्वतंत्रता आंदोलन में गांधी जी ने छुआछूत का विरोध किया, लेकिन उन्होंने वर्णाश्रम धर्म और कर्म को बनाए रखा। स्वच्छता का पाठ पढ़ाने वाले गांधी जी को दलितों ने नहीं स्वीकारा, क्योंकि गांधी के झाड़ू-ज्ञान ने वर्ण व्यवस्था की अंधेरी बदबू को दूर नहीं किया। झूठे बदलाव की छाया से दलित उबर नहीं हुआ। चौदह अप्रैल, अठारह सौ इक्यानवे में दलितों के प्रज्ञा सूर्य डॉ. आंबेडकर का उदय हुआ, जिसने सदियों की गुलामी तोड़ी, झाड़ू के स्थान पर कलम दी, शिक्षा के बल पर शासन-प्रशासन की ऊँची कुर्सी पर बैठाया और शासन में सत्ता के पद दिए। स्वतंत्र भारत में मूलवासी, आदिवासी, नागवंशी, बौद्ध वंशजों को जो अछूत बनाए गए थे, घुमन्तू खानाबदोश तथा करोड़ों श्रमिकों को मानवीय अधिकार प्राप्त हुए। संविधान और जनतंत्र की स्थापना में डॉ. आंबेडकर की विशेष भूमिका थी-''न्यायता संविधान सुंदर प्रज्ञा सूर्य के सपनों का है प्रबुद्ध भारत।''[4]

कवि की लंबी कविता में जातिवाद से उत्पन्न विषमता तथा अन्याय को नकारा गया। जाति भेद की दीवारें इतनी कि चीन की दीवार भी छोटी बन जाए। भारत में जन्म के आधार पर सवर्ण-दलित, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब का भेद प्रारंभ हो जाएगा। मनुस्मृति का दंश आज भी लोगों को प्रताड़ित करता है। मनु की वर्णाश्रम कठोर व्यवस्था ने दलितों को अपंग बनाया था- ''वह आज भी जिन्दा है / लोगों के दिलों में, दिमागों में / दिलो-दिमाग से वह उतर आता है / कार्यालयों की फाइलों में और अवसर पाते ही / बहिष्कृतों का मारता रहता है देश।''[5] देश में संविधान के अनुसार शासन की व्यवस्था चलती है किंतु ब्राह्मणवादी मनुराज गाँवों में विद्यमान है जो दलितों को प्रताड़ित देता है- ''सामाजिक स्तर पर / गाँवों-गाँवों में हम चलाते हैं /

अपना मनुराज।'' सदियों से दलितों को परतंत्रता और गुलामी का जीवन मिला। कवि की 'गुलाम' कविता में अनेक प्रश्नों को उठाया गया। सवर्ण समाज ने दलितों का उत्पीड़न किया। कवि ने वर्ण, जाति, धर्म और ईश्वर के नाम पर होने वाले शोषण तथा अन्याय को दिखलाया। क्यों सवर्णों को दलितों की बंजर जमीन की चीख नहीं सुनाई पड़ी? क्यों बेबुनियाद दलितों के दु:ख नहीं दिखाई पड़े? क्यों दलितों के दर्द पर उनके मुँह पर ताला लगा था? क्यों दलितों के बहिष्कृत और उत्पीड़ित स्थिति पर सनातनी आँखों में आँसू नहीं आए? क्यों दलितों को वर्ण व्यवस्था की गंदी नाली में सड़ने दिया? क्यों मनुष्यता को त्यागकर पत्थर के ईश्वर को महान बनाया गया? क्यों सवर्ण के साहित्य में दलित उपेक्षित थे? आदि प्रश्नों पर चिंताएँ वास्तविक भी हैं। कवि गुलामी की प्रथा पर प्रश्नचिह्न लगाता है किंतु सवर्ण के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगा क्योंकि दलित न्याय और समता के पक्षधर हैं-''अब हमारे मालिक बनने के दिन आए हैं। लेकिन तुम्हें नहीं बनाएँगे हम गुलाम।''[7]

इस संग्रह में ज्यादातर कविताएँ अग्नि को लेकर लिखी गई हैं। यह अग्नि दलितों के आक्रोश से निकली है तथा अन्याय-अत्याचार के खिलाफ यह अग्नि दहकने लगी। 'नफरत की आग', 'नंगा नाच', 'कैसे बुझेगी यह आग?', 'समय के आँखों की आग', 'समय' आदि कविताओं में अग्नि की ज्वाला उभरती है। कभी यह अग्नि पेट की भूख बनकर उभरती, कभी यह अग्नि सांप्रदायिकता के जहर पर टूट पड़ती है। कभी दलित विरोधी ग्रंथों एवं शास्त्रों के प्रति अग्नि दहकती है। कभी सत्ता और व्यवस्था के घिनौने चरित्र पर यह अग्नि जलती है। कवि अपनी कविता में हवा की तरह उन्मुक्त, अग्नि में अंगार और फूलों की तरह खुशबू बिखेरता है। प्रेम, करुणा, शांति, प्रज्ञा और कर्म के प्रति उनकी गहरी सजगता उभरती है-''जरूरत हो तो हवा बनो ताकि / आग की जरूरत हो तो / मजहबी जहर को रोका जाए और समता की खुशबू फैलाई जा सके।''8 स्वतंत्रता के सत्तर वर्ष के पश्चात भी भारत की एक बड़ी आबादी की गरीबी, भूख, बेरोजगारी, कुपोषण और आवास जैसी समस्याओं का समाधान नहीं हुआ। हाशिए के गरीब जन और दलितों के आर्थिक जीवन में बदलाव नहीं हुआ। उनकी रोटी का 'गाना', 'सत्ता के आंगन में', 'फूलों के गालों पर', 'वे सब गूंगे हैं', 'दवा की तलाश' और 'आंबेडकरवादी दिल्ली' कविताओं में भ्रष्ट व्यवस्था का विरोध, सत्ता के शोषण, आर्थिक वैषम्य और राजनीतिक अन्याय का प्रतिरोध हुआ। कवि ने सत्ता का सुख भोगने वाले दलित नेताओं पर भी हमला किया जो दलित समाज से विमुख बने रहे तथा उनके साथ होने वाले अत्याचार तथा दमन का विरोध नहीं किया। हाशिए के धूमंतु मूलवंशी, आदिवासी, श्रमिक और दलितों के भूखे पेट, गंदे कपड़े और खाली झोली उनकी दयनीय दशा को दर्शाती है। 'रोटी का गाना' जीवन कविता है जो भूखे आदमी की निश्चित आवश्यकता को दिखलाती है-''भूख पेट है खाली झोली / चाहत तो है मेरी / मिले काम, दाम, दाना / तभी मैं गाऊंगा रोटी का गाना।''[9] आज के समय में मनुष्यता का भाव कमजोर हो चला। सत्ता पर क्रूर, हिंसक और दमनकारी लोगों का दबदबा है। 'बेर' और 'बबूल के कांटे' सत्ता के शासन पर हैं किंतु 'आम का पेड़ सत्ता से विमुख है'-''आम का पेड़ / खड़ा है नंगा / अपनी छाया खोकर सत्ता के आंगन में।''10 जहाँ झोपड़ियों की आँखें बरसती, पेड़ उपेक्षित बने हुए, मिट्टी आदमी के लहू की प्यासी बनी और मासूम फूलों पर भूख के आँसू टपकते हों आदि इन सभी दृश्यों एवं चित्रों में गरीबी के अभाव उभरते हैं। देश की संवैधानिक व्यवस्था में सभी को न्याय, समानता, स्वतंत्रता और समता मिली, लेकिन गरीब आदमी के जख्मों, दु:ख-दर्द की वेदना और यातना को न कोई देखने वाला, न कोई सुनने वाला और न कोई जानने वाला-''इसलिए कि / हमारे जख्मों की भाषा / कोई सुन सके लेकिन यहाँ तो सब बहरे हैं।''11 स्वतंत्र भारत में दलितों पर अत्याचार, आगजनी, हिंसा, अपराध, बलात्कार और हत्याओं का दौर जारी रहा। मनुवादी और फासीवादी ताकतों ने लगातार हमले किए। कवि इन सवर्णों की मानसिकता को बदलना चाहता है। उनकी 'एकलव्य का अंगूठा', 'शहीदों का गान' और 'बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर' आदि कविताओं में ऐतिहासिक चरित्रों के द्वारा देशभक्ति भाव व्यक्त हुआ है तथा दलितों के अधिकारों का समर्थन भी। दलितों की नयी पीढ़ी 'अंबेडकर की चौत्य भूमि', 'दीक्षा भूमि', 'एनलाइटनमेंट' का नया पाठ पढ़ रही है। दलितों के लिए डॉ. आंबेडकर का मतलब है- जाति, वर्ण, अन्याय, अज्ञानता का विरोध। बहुजन समाज को समता, एकता, बंधुत्व, न्याय के मार्ग पर चलने का बोध कराता है।

कवि दामोदर मोरे की कविता में नीला रंग, नीली सुबह, सूरज की किरण, करुणा का कमल, नया सूरज, प्रज्ञा सूर्य और बोधिवृक्ष आदि जैसे शब्दों के द्वारा नए प्रतीकों, बिंबों और उपमानों का प्रयोग हुआ है। उनकी कविता अंधेरे के विरुद्ध प्रकाश की बेला है। साम्प्रदायिकता, जातिवाद, धर्मान्धता, अराजकता आदि को भेदती हुई उनकी कविता पूर्व की ओर बढ़ रही है। उनकी कविता में प्रज्ञा का सूर्य चमकता, प्रज्ञा का सूर्य फैलता, करुणा का कमल पुष्पित होता और अप्पो दीपो भव: का संकल्प जगाता है। उनकी कविता नीले आकाश में स्वतंत्रता

तथा उन्मुक्त उड़ने की आजादी देती है, अशोक वृक्ष की तरह ऊँचा उठाती तथा मानवता के सरोवर में स्नान कराती है। बुद्ध, ज्योतिबा फुले और आंबेडकर का प्रकाश उनकी कविता में लबालब भरा हुआ। नयी सदी का नया सूरज अंधकार को अवश्य पराजित करेगा तथा आंबेडकरवादी कवि का संघर्ष भी यूँ ही चलता रहेगा–"कैसे कहूँ तुझे मैं पूर्व? / अंधेरे के डर से उग नहीं रहा है सूरज / मैं तो अंधेरे से लड़ता रहूँगा / मैं ही हूँ एक नया सूरज।12

निष्कर्ष

प्रो. दामोदर मोरे की कविताएँ आंबेडकरवादी दृष्टि की सशक्त और सजग अभिव्यक्ति हैं। उनकी काव्य–चेतना केवल संवेदना का विस्तार नहीं, बल्कि वैचारिक प्रतिरोध का प्रखर रूप है। 'नीला' रंग उनके यहाँ सौंदर्य–तत्व नहीं, बल्कि समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और संवैधानिक नैतिकता का क्रांतिकारी प्रतीक है। 'प्रज्ञा सूर्य', 'करुणा का कमल', 'अग्नि', 'भूख' और 'नीला आकाश' जैसे प्रतीकों के माध्यम से कवि ने सामाजिक विषमता, जातिगत उत्पीड़न और धार्मिक पाखंड के विरुद्ध वैचारिक संघर्ष को रूपायित किया है।

उनकी कविता अतीत के अपमान और वर्तमान के अन्याय को उद्घाटित करती हुई भविष्य की न्यायपूर्ण सामाजिक संरचना की ओर संकेत करती है। वर्णव्यवस्था, मनुवादी मानसिकता और सत्ता–संरक्षित शोषण के विरुद्ध उनका स्वर स्पष्ट, निर्भीक और प्रतिरोधी है। साथ ही, वे करुणा, मानवता और समता के मूल्यों को स्थापित करते हुए सामाजिक पुनर्निर्माण की दिशा भी प्रस्तुत करते हैं।

मोरे की काव्य–दृष्टि यह सिद्ध करती है कि आंबेडकरवादी कविता केवल आक्रोश की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि वैचारिक अनुशासन, नैतिक प्रतिबद्धता और परिवर्तनकारी चेतना का सृजनात्मक रूप है। इस प्रकार उनकी कविता समकालीन हिंदी साहित्य में आंबेडकरवादी साहित्य की विचार–धारा को गहराई, व्यापकता और वैचारिक स्पष्टता प्रदान करती है।

सन्दर्भ

- नीले शब्दों की छाया में, प्रो. दामोदर मोरे, पृ. 03
- वही, पृ. 72
- वही, पृ. 46
- वही, पृ. 52
- वही, पृ. 44
- वही, पृ. 63
- वही, पृ. 49
- वही, पृ. 14
- वही, पृ. 19
- वही, पृ. 22
- वही, पृ. 28
- वही, पृ. 31

गुरु रविदास पचासा : एक समतामूलक काव्य-दृष्टि का सशक्त हस्तक्षेप

लेखक : देवचंद्र भारती 'प्रखर'

प्रकाशक : आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन

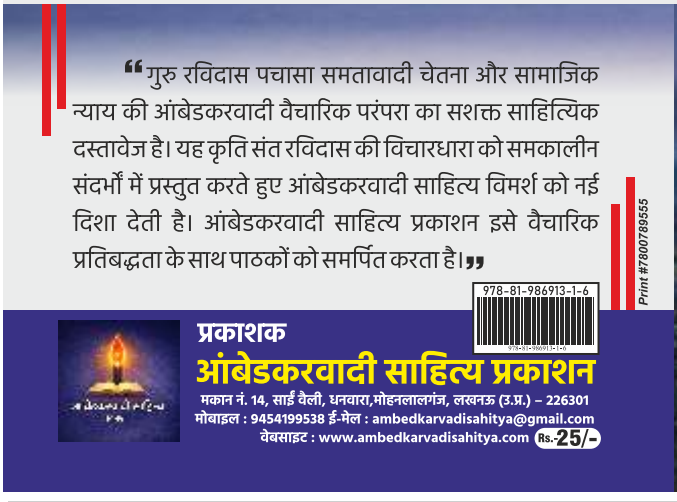

भारत-कनाडा संबंधों का समकालीन संकट : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

- डॉ. सुशील कुमार यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, सैन्य अध्ययन विभाग, के.जी.के.पी.जी. कॉलेज मुरादाबाद (उ.प्र.)

शोध सारांश -

यह शोध-पत्र भारत और कनाडा के बीच हाल के वर्षों में उत्पन्न कूटनीतिक तनावों का विश्लेषण करता है। ऐतिहासिक रूप से भारत-कनाडा संबंध मित्रतापूर्ण, सहयोगात्मक और बहुआयामी रहे हैं, किंतु समकालीन वैश्विक राजनीति, आंतरिक राजनीतिक दबावों तथा खालिस्तानी अलगाववादी गतिविधियों के प्रति कनाडा सरकार के रुख ने इन संबंधों में गंभीर दरार उत्पन्न की है। शोध में विशेष रूप से खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या से जुड़े आरोप-प्रत्यारोप, राजनयिक निष्कासन, द्विपक्षीय विश्वास में गिरावट तथा अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत के दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन यह स्थापित करने का प्रयास करता है कि कूटनीतिक परिपक्वता के अभाव, घरेलू राजनीति के हस्तक्षेप और आतंकवाद के प्रति अस्पष्ट नीति के कारण भारत-कनाडा संबंध वर्तमान में एक संवेदनशील और संकटपूर्ण दौर से गुजर रहे हैं। शोध का निष्कर्ष यह रेखांकित करता है कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में राजनीतिक तात्कालिक लाभ की बजाय दीर्घकालिक कूटनीतिक विवेक और आपसी सम्मान आवश्यक है।

बीज शब्द

भारत-कनाडा संबंध, कूटनीतिक तनाव, खालिस्तानी आंदोलन, आतंकवाद, द्विपक्षीय संबंध, अंतरराष्ट्रीय राजनीति, राजनयिक निष्कासन, कूटनीतिक परिपक्वता।

शोध पद्धति

यह शोध वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। अध्ययन में निम्नलिखित स्रोतों और तरीकों का प्रयोग किया गया है-

1. द्वितीयक स्रोतों का अध्ययन-

समाचार पत्रों, संपादकीय लेखों, अंतरराष्ट्रीय संबंधों से संबंधित पुस्तकों, शोध लेखों तथा आधिकारिक वक्तव्यों का विश्लेषण।

2. समकालीन घटनाओं का विश्लेषण-

भारत-कनाडा के बीच हालिया कूटनीतिक घटनाक्रम, राजनयिक कार्रवाइयों और राजनीतिक बयानों का तुलनात्मक अध्ययन।

3. आलोचनात्मक दृष्टिकोण-

दोनों देशों की नीतियों, विशेषकर कनाडा सरकार की आंतरिक राजनीति और आतंकवाद के प्रति दृष्टिकोण का आलोचनात्मक मूल्यांकन।

4. कारण-परिणाम विश्लेषण-

कूटनीतिक तनावों के पीछे के राजनीतिक, रणनीतिक और वैचारिक कारणों तथा उनके संभावित प्रभावों की पहचान।

मूल लेख

विदेश नीति मामलों के विशेषज्ञों का मानना है कि कनाडाई प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो की बचकाना हरकतों पर भारत की प्रतिक्रिया सहज थी। उन्होंने कहा, भारत पर लगाए गए गलत आरोपों से ही दोनों देशों के बीच रिश्ते बिगड़े हैं। भारतीय विदेश नीति के विशेषज्ञों को लगता है कि कनाडा शायद जानबूझकर तनाव बढ़ाना चाहता है। इसी संदर्भ में भारत की रक्षा विशेषज्ञ शिवाली देशपांडे ने कहा कि खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या से उपजे विवाद पर भारतीय राजनयिकों की कनाडा से वापसी भारत सरकार का कड़ा कदम है। इससे पूरी दुनिया को दिखा दिया है कि भारत इस तरह की बेवजह हरकतों को बर्दाश्त नहीं करेगा। यह भारत के एक सशक्त देश के तौर पर उभरने का संकेत भी है। उन्होंने यह भी कहा कि यह संदेश है कि यदि कोई भारत के साथ खिलवाड़ करने की कोशिश करेगा, तो उसके गंभीर परिणाम होंगे। उन्होंने कनाडाई प्रधानमंत्री ट्रूडो द्वारा भारत के विरुद्ध सबूत न दे पाने को अशोभनीय बताया।

कनाडा में भारत के राजदूत रह चुके के. पी. फैबियन ने

रक्षा विशेषज्ञ शिवाली देशपांडे की बात से सहमति जताते हुए कहा, ऐसा लगता है कि कनाडा जानबूझकर तनाव बढ़ाना चाहता है।

कनाडा और भारत के बीच उन्नीसवीं सदी से द्विपक्षीय सम्बन्ध रहे हैं। दोनों ही देश राष्ट्रमंडल के सदस्य देश हैं और दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के समूह जी-20 का सदस्य देश भी हैं। उन्नीसवीं सदी से ही भारत-कनाडा के बीच अच्छे सम्बन्ध रहे हैं और भारतीय नागरिक कनाडा जाकर विभिन्न प्रकार की नौकरियों में कार्य करते रहे हैं। हमारा देश भारत, भारतीय प्रवासियों के साथ कनाडा में आप्रवासन के लिए एक प्रमुख देश बन गया। जब भारत 15 अगस्त 1947 में स्वतंत्र हुआ तब दोनों देशों के बीच सम्बन्ध और भी घनिष्ठता के साथ आगे बढ़ा। कनाडा और भारत सन 1990 के दशक में एक-दूसरे के साथ व्यापारिक सौदों, द्विपक्षीय यात्राओं और अन्य क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के हितों को बढ़ावा दिया। वैसे तो भारत और कनाडा के बीच रिश्ते बहुत व्यापक रहे हैं, लेकिन सन 1998 ई० में भारत द्वारा दूसरा परमाणु परीक्षण करने के बाद कनाडा और भारत के बीच रिश्ते कुछ समय के लिए तनावपूर्ण हो गये। हालांकि अतिशीघ्र दोनों देशों में सम्बन्धों में सुधार भी हो गया। वर्तमान में कनाडा और भारत के बीच सम्बन्ध खालिस्तानी आंदोलन से जुड़े सिख अलगाववादियों द्वारा भारत में एक स्वतंत्र सिख पंजाबी राष्ट्र-राज्य की मांग किए जाने के कारण तनावपूर्ण हो गए हैं।

वर्ष 2023 में सिख विरोधी प्रदर्शनों और कनाडा के विविध आरोपों के लगाए जाने के पश्चात भारत-कनाडा के बीच सम्बन्ध तनावपूर्ण हो रहे हैं। दोनों देशों के बीच कूटनीतिक तनाव में वर्तमान में बढ़ोतरी हो गई है और दोनों ही देशों ने एक-दूसरे के राजनयिकों को अपने देश से निष्कासित भी कर दिया है। कनाडा ने खालिस्तानी समर्थक आतंकवादी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या में भारत पर आरोप लगाए हैं जब कि भारत सरकार ने यह दावा किया कि कनाडा झूठे आरोप भारत पर लगा रहा है और कनाडा ने कोई सबूत नहीं दिया है। इस पर कनाडा का तर्क है कि खुफिया सूचना द्वारा उसे जानकारी मिली है कि इस घटना में भारत का हाथ है। जब कि भारत कनाडा के तर्क को सिरे से खारिज करता है और कहता है कि यह बेबुनियाद है। इन्हीं कारणों से वर्तमान अक्टूबर 2024 में कनाडा और भारत ने एक-दूसरे के राजनयिकों को अपने-अपने देशों से पुनः निष्कासित कर दिया है, और दोनों के बीच तनावपूर्ण स्थिति बनी हुई है।

कनाडा के प्रधानमंत्री जस्टिन ट्रूडो की सरकार ने बगैर कोई सबूत पेश किए एक बार फिर भारत पर खालिस्तानी चरमपंथी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या कराने का जो आरोप लगाए हैं, वे पूरी तरह से अस्वीकार्य हैं। एक देश का दूसरे देश के साथ कूटनीतिक रिश्ते परिपक्वता की मांग करते हैं। किन्तु कनाडा के प्रधानमंत्री ट्रूडो जिस तरह अपनी सियासी सहूलियत को देखते हुए खालिस्तानी आतंकियों को समर्थन देने से बाज नहीं आ रहे हैं, उसे देखते हुए कनाडा को भारत की ओर से करारा जवाब मिलना ही चाहिए।

हाल ही में अपने राजनीतिक संदेशों में खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या को लेकर कनाडा द्वारा भारत पर एक बार फिर से आरोप लगाए जा रहे हैं। ये आरोप एकदम अस्वीकार्य होने के बावजूद हैरान नहीं करते, क्योंकि मनगढ़ंत और बेबुनियाद आरोप लगाने की इसी आदत के चलते प्रधानमंत्री ट्रूडो ने अमेरिका, चीन और विश्व की कई बड़ी शक्तियों के साथ अपने रिश्ते असहज कर लिए हैं।

कनाडा द्वारा भारत पर बेबुनियाद आरोप लगाए जाने के बाद इस बार भारत ने कड़ा रुख दिखाते हुए कनाडा से अपने उच्चायुक्त समेत पाँच अधिकारियों को वापस बुला लिया है। भारत के इस कड़े कदम से बौखलाई ट्रूडो की सरकार ने भारत के छह राजनयिकों को कनाडा छोड़कर जाने को कहा है। इधर हमारी भारत की सरकार ने भी कनाडा के राजनयिक अधिकारियों को भारत छोड़कर जाने को कहा है। भारत ने कनाडा से अपने उच्चायुक्त समेत कुछ और राजनयिकों को वापस बुलाने के साथ कनाडा के छह राजनयिकों को निष्कासित करने का जो कठोर कदम उठाया है, वह समय की मांग है। कनाडा सरकार अपने संकीर्ण राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए जिस तरह भारतीय राजनयिकों को बदनाम करने और उनकी सुरक्षा के लिए खतरा पैदा करने में लगी हुई है, उसका करारा जवाब देना अति आवश्यक हो गया था।

भारत-कनाडा के बीच सम्बन्धों को लेकर बढ़ते विवाद से यही प्रतीत होता है कि एक नेता (ट्रूडो) की कूटनीतिक अदूरदर्शिता से दोनों देशों के बीच सम्बन्ध खतरनाक मोड़ पर पहुँच चुके हैं। भारत को अपने उच्चायुक्त सहित अधिकारियों को वापस बुलाने का फैसला इसलिए करना पड़ा, क्योंकि कनाडा की ट्रूडो सरकार से खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर की हत्या में भारतीय उच्चायुक्त सहित कुछ अन्य राजनयिकों की कथित संलिप्तता की जाँच की जरूरत जताई थी। ट्रूडो की कनाडा सरकार ने इसके पहले भी अपने यहाँ पल रहे खालिस्तानियों को खुश करने के लिए निज्जर की हत्या के लिए भारतीय राजनयिकों को जिम्मेदार ठहराने की हास्यास्पद

कोशिश की थी। उस समय भी भारत सरकार ने अपने कड़े रुख का परिचय दिया था और कनाडा के लिए वीजा सेवा रोक दिया था। लगता है कि कनाडा सरकार ने नये सिरे से खालिस्तानियों को खुश करने में जुट गई है।

इस बात की अनदेखी नहीं की जा सकती है कि वह निज्जर की हत्या में भारत को कटघरे में खड़ा करने की कोशिश तो कर रही है, परन्तु इसके सन्दर्भ में कोई प्रमाण उपलब्ध कराने से इंकार कर रही है। वह इस तथ्य से भी मुँह चुरा रही है कि खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर फर्जी दस्तावेजों के जरिए कनाडा पहुँचा था, तब कनाडा की सरकार ने उसे हवाई यात्रा करने से रोक दिया था। कनाडा की सरकार खालिस्तानियों के प्रभाव में आकर निज्जर को नागरिकता प्रदान कर दी थी। खालिस्तानियों की हमदर्दी हासिल करने के लिए प्रधानमंत्री ट्रूडो निरन्तर प्रयास कर रहे हैं; न केवल भारत से सम्बन्ध खराब कर रहे हैं, बल्कि अपने देश को खालिस्तानी अतिवादियों और आतंकियों का गढ़ बनाने में लगे हैं।

कनाडा में भारत के बाद दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी सिख आबादी रहती है। प्रधानमंत्री ट्रूडो सिखों से राजनीतिक लाभ लेने के लिए खालिस्तानी चरमपंथियों की निंदा करने से बचते हैं, क्योंकि कनाडा में वर्ष 2025 में चुनाव होने वाले हैं और ट्रूडो फिर से कनाडा का प्रधानमंत्री बनना चाह रहे हैं। अपनी सत्ता बचाये रखने के लिए प्रधानमंत्री ट्रूडो खालिस्तानी तत्वों के हाथों में खेलने को स्वतंत्र हैं, लेकिन उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती कि वह भारतीय हितों के लिए खतरा पैदा करें। हालांकि पिछले कुछ समय से भारत की आपत्तियों के बाद भी वह ऐसा ही कर रहे हैं, शायद इसलिए प्रधानमंत्री ट्रूडो ने खालिस्तानी अतिवादियों और आतंकियों को इतनी छूट दी है कि वे इंदिरा गांधी की हत्या वाली घटना की परेड निकालते हैं।

इतना ही नहीं ट्रूडो उन तत्वों के खिलाफ कोई कार्रवाई भी नहीं करते, जो भारतीय राजनयिकों को खुलेआम भी धमकाते हैं और यहां तक कि उनके पोस्टरों पर गोलीबारी करते हुए वीडियो जारी करते हैं। ट्रूडो द्वारा खालिस्तानियों को दिए जा रहे सह से भारत के साथ कूटनीतिक रिश्ते बिगड़ते ही जा रहे हैं। भारत ट्रूडो के द्वारा झूठे व बेबुनियाद लगाए जा रहे आरोपों को सिरे से खारिज करता है, और भारत इसे पूरी तरह अस्वीकार्य करता है।

कनाडा के प्रधानमंत्री ट्रूडो प्राय: मंच पर कहते हुए पाए जाते हैं कि उनका मुल्क कानून के राज पर विश्वास करता है, लेकिन उन्होंने अपने देश को अपराधियों के हाथों में सौंप दिया है। कनाडा ने भारत पर जो बेबुनियाद आरोप लगाए हैं उसे भारत ने –ढ़ता के साथ खारिज कर दिया है और कहा है कि भारत को पूरी तरह से अस्वीकार्य है। कनाडा की ट्रूडो सरकार वोट बैंक की राजनीति के तहत बेबुनियाद व झूठे आरोप लगा रही है। दरअसल कनाडा ने निज्जर की हत्या का जो झूठा आरोप भारत पर लगाया था उसका कोई भी सबूत अभी तक प्रस्तुत नहीं कर पाया है। ट्रूडो की इस हरकत से भारतीय अधिकारियों पर संकट जरूर बढ़ गये हैं जो कि पहले से ही वहाँ बसे खालिस्तान समर्थकों के निशाने पर हैं। ट्रूडो के इस बौखलाहट भरे कदम से कनाडा में रह रहे भारतीय मूल के करीब बीस लाख लोग और वहाँ पढ़ाई–लिखाई करने गये भारतीय मूल के लगभग सत्तर हजार भारतीय छात्रों का संकट भी समझा जा सकता है।

कनाडा में वर्ष 2025 में चुनाव होने वाले हैं और प्रधानमंत्री ट्रूडो की लोकप्रियता तेजी से घटी है क्योंकि कनाडा में बढ़ती महंगाई, बढ़ते हुए अपराध, बढ़ते हुए आन्तरिक मामले आदि ऐसे गंभीर मुद्दे हैं जिससे वहाँ की जनता त्रस्त है और निरंतर ही ट्रूडो की राजनीतिक लोकप्रियता घटी है। ऐसे में ट्रूडो 2025 के होने वाले चुनाव में सिखों के समर्थन की उम्मीद कर रहे हैं क्योंकि सिखों की अच्छी खासी आबादी कनाडा में निवास करती है जो राजनीतिक रूप से किसी की चुनावी सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यही कारण है कि अपनी घटती राजनीतिक लोकप्रियता के बीच सिख वोटों के समर्थन से ट्रूडो 2025 में पुन: कनाडा का प्रधानमंत्री इसलिए बनना चाहते हैं। इसलिए वह राजनीतिक रूप से शशक्त खालिस्तान समर्थक सिख वर्ग का समर्थन नहीं खोना चाहते। इसलिए प्रधानमंत्री ट्रूडो अब खुलकर खालिस्तान समर्थक आतंकियों का समर्थन कर रही है और भारतीय हितों के विरुद्ध काम कर रही है। इससे जाहिर है कि इसके पीछे ट्रूडो की निजी राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं हैं, जिनके प्रति भारत का सख्त विरोध हर लिहाज से तर्कसंगत है।

भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने इस कनाडाई विवाद के साथ पूर्वी एशियाई देशों के सम्मेलन 21 सितम्बर 2024 को लाओस के वियतनियाने में संक्षिप्त मुलाकात की थी। मोदी ने कहा कि दुनिया के विभिन्न हिस्सों में चल रहे संघर्षों का सबसे नकारात्मक असर वैश्विवक दक्षिण के देशों पर पड़ रहा है इसलिए अतिशीघ्र शांति व स्थिरता बहाल की जानी चाहिए। मोदी जी ने कहा, मैं बुद्ध की धरती से आता हूँ, मैंने बार–बार कहा है कि यह युद्ध का युग नहीं है, समस्याओं का समाधान युद्ध के मैदान से नहीं निकल सकता। वैश्विवक युद्धों की वजह से जब पूरी दुनिया में अनिश्चितता है।

ऐसे में पूर्वी एशियाई देशों के सम्मेलन में प्रधानमंत्री

मोदी का शामिल होना कूटनीतिक लिहाज से तो अहम है ही साथ ही साथ हिंद-प्रशांत क्षेत्र की स्थितियों को लेकर भारत की गंभीरता को भी दर्शाता है। कनाडाई प्रधानमंत्री ट्रूडो को यह समझना ही होगा कि कूटनीतिक रिश्ते परिपक्वता की मांग करते हैं। मध्य अक्टूबर 2024 में भारत ने स्पष्ट कहा कि कनाडा ने खालिस्तानी आतंकी हरदीप सिंह निज्जर की पिछले वर्ष हुई हत्या मामले में अब तक एक भी पुख्ता सबूत नहीं दिया है, जिसे लेकर वो भारत पर झूठा आरोप लगा रहा है।

यही नहीं अब तो कनाडा की ट्रूडो सरकार ने भारत की जेल में बंद एक भारतीय गैंगस्टर पर अपने प्रिय आतंकवादी हरदीप निज्जर को खत्म करवाने का आरोप लगाया है। अब ट्रूडो को कौन समझाए कि यह सब पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आई.एस.आई. का किया धरा है, क्यों कि ऐसी विश्वसनीय रिपोर्ट है कि पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी ने भारत के साथ कनाडा के संबंधों को खराब करने के लिए उनके प्रिय आतंकवादी निज्जर को खत्म करवा दिया। वाशिंगटन पोस्ट ने गुप्तचर के सुरक्षा कैमरों के आधार पर एक कहानी प्रकाशित की है जिसके बाहर हरदीप निज्जर को गोली मारी गई थी, जिसमें गवाहों ने आरोप लगाया है कि कनाडाई पुलिस ने प्लंबर की मौत की एक औपचारिक जांच की, कि यह एक सुनियोजित हत्या थी, जिसमें दो कारों में कम से कम छह लोग शामिल थे। लगभग एक वर्ष के भीतर ही पाकिस्तानियों ने अपनी भारत विरोधी साजिश से भारत-कनाडा संबंधों को गंभीर रूप से नुकसान पहुँचाया है जिसे फिर से बनाने में, सुधारने में कई वर्ष लगेंगे।

संयुक्त राष्ट्र संघ और दूसरे अंतर्राष्ट्रीय महत्वपूर्ण मंचों पर भी भारत का रुख सदैव ही इस मामले में बिल्कुल स्पष्ट रहा है कि आतंकवाद व हिंसा पर कार्रवाई सियासी सहूलियत से नहीं होनी चाहिए। दो लोकतांत्रिक देशों के मध्य कूटनीतिक रिश्ते परिपक्वता की मांग करते हैं, लेकिन मौजूदा परिदृश्य में कनाडाई प्रधानमंत्री ट्रूडो से इसकी उम्मीद करना कुछ ज्यादा ही होगा।

निष्कर्ष : मेरा व्यक्तिगत रूप से ऐसा मानना है कि प्रधानमंत्री ट्रूडो एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनमें किसी को दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को बनाए रखने के लिए कूटनीतिक रिश्ते परिपक्वता की मांग करते हैं। ऐसे में ट्रूडो वोट बैंक का राजनीतिक लाभ व समर्थन प्राप्त करने के लिए भारत से कनाडा के रिश्तों को खराब कर लिए हैं, जो किसी भी प्रकार से सही नहीं ठहराये जा सकते हैं। उक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कनाडा में रहने वाले सभी भारतीय समुदायों को सावधान रहना चाहिए। भारत सरकार को चाहिए कि वह इन बिगड़ते हुए हालात में कनाडा सरकार के प्रति सतर्क रहे क्योंकि कि ट्रूडो की कूटनीतिक अदूरदर्शिता से दोनों देशों के वर्तमान सम्बन्ध खतरनाक मोड़ पर पहुँच गये हैं। ऐसी परिस्थितियों में भारत को अपने पड़ोसी देशों से भी सतर्क रहना होगा क्योंकि कि भारत की अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बढ़ती हुई साख से भी परेशान है और चिंतित हैं।

निष्कर्ष

यह शोध निष्कर्ष निकालता है कि भारत-कनाडा के बीच बिगड़ते कूटनीतिक रिश्ते किसी एक घटना का परिणाम नहीं हैं, बल्कि यह दीर्घकालिक नीति-गत अस्पष्टताओं, घरेलू राजनीतिक हितों और आतंकवाद के प्रति दोहरे मानदंडों का प्रतिफल हैं। कनाडा सरकार द्वारा खालिस्तानी अलगाववादी तत्वों के प्रति अपनाया गया नरम रुख और बिना ठोस प्रमाणों के भारत पर लगाए गए आरोपों ने द्विपक्षीय विश्वास को गहरा आघात पहुँचाया है।

भारत ने इस स्थिति में अपनी संप्रभुता, सुरक्षा और राजनयिक मर्यादा की रक्षा के लिए कठोर लेकिन आवश्यक कदम उठाए हैं, जो एक सशक्त और आत्मविश्वासी राष्ट्र के रूप में उसके उभार को दर्शाते हैं।

शोध यह स्पष्ट करता है कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में कूटनीतिक परिपक्वता, आतंकवाद के प्रति स्पष्ट नीति और पारस्परिक सम्मान अनिवार्य हैं। यदि कनाडा अपने आंतरिक राजनीतिक हितों को अंतरराष्ट्रीय दायित्वों से ऊपर रखता रहा, तो भारत-कनाडा संबंधों का भविष्य और अधिक जटिल हो सकता है। स्थायी सुधार के लिए संवाद, प्रमाण-आधारित कूटनीति और राजनीतिक जिम्मेदारी अपरिहार्य है।

सन्दर्भ सूची :-

1. फड़ियां, वी० एल०, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध
2. पाण्डेय, राम सूरत, राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध
3. अमर उजाला, 12 अक्टूबर 2024
4. अमर उजाला (प्रवाह), 14 अक्टूबर 2024
5. दैनिक जागरण (संपादकीय), 15 अक्टूबर 2024
6. अमर उजाला (प्रवाह), 16 अक्टूबर 2024
7. अमर उजाला, 17 अक्टूबर 2024
8. दैनिक जागरण, 18 अक्टूबर 2024
9. अमर उजाला (संपादकीय), 19 अक्टूबर 2024
10. अमर उजाला, 20 अक्टूबर 2024
11. दैनिक जागरण, 22 अक्टूबर 2024

नाम ज़्यादा, समझ कम : संविधान, समाज और हमारा समय

- डॉ. बी.आर. बुद्धप्रिय

प्रस्तावना

समकालीन भारत में संविधान और डॉ. आंबेडकर का उल्लेख पहले की तुलना में कहीं अधिक दिखाई देता है। सार्वजनिक कार्यक्रमों में प्रस्तावना पढ़ी जाती है, सोशल मीडिया पर उद्धरण साझा किए जाते हैं, और आंबेडकर की तस्वीरें व्यापक रूप से प्रदर्शित होती हैं। यह दृश्य उपस्थिति सकारात्मक प्रतीत होती है, परंतु इसके साथ एक गंभीर प्रश्न भी जुड़ा है-क्या विचार की गहराई भी उसी अनुपात में बढ़ी है?

आज आवश्यकता इस बात की है कि प्रतीक और विचार के अंतर को समझा जाए। संविधान को केवल औपचारिक दस्तावेज के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक आचरण की आधारशिला के रूप में देखा जाए।

संविधान : केवल कानून नहीं, सामाजिक दिशा

भारत का संविधान शासन की रूपरेखा भर नहीं है। यह उस समाज की कल्पना प्रस्तुत करता है जो न्याय, समानता और स्वतंत्रता पर आधारित हो।

- अनुच्छेद 14 सभी नागरिकों को विधि के समक्ष समानता प्रदान करता है।
- अनुच्छेद 15 धर्म, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव को निषिद्ध करता है।
- अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त घोषित करता है।
- अनुच्छेद 21 प्रत्येक व्यक्ति को गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार देता है।

ये प्रावधान केवल अदालतों के लिए नहीं हैं। ये समाज के लिए हैं। भीमराव रामजी आंबेडकर ने स्पष्ट कहा था कि राजनीतिक लोकतंत्र तभी टिकेगा जब सामाजिक लोकतंत्र स्थापित होगा। सामाजिक लोकतंत्र का अर्थ है- स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन का व्यवहारिक मूल्य बनाना।

सामाजिक व्यवहार और संवैधानिक नैतिकता

कानून परिवर्तन की दिशा देता है, पर व्यवहार परिवर्तन समाज को करना होता है। अस्पृश्यता को समाप्त घोषित किए जाने के दशकों बाद भी यदि जाति के आधार पर अपमान या बहिष्कार की घटनाएँ सामने आती हैं, तो यह बताता है कि कानून लागू हुआ, पर मानसिकता नहीं बदली। संवैधानिक नैतिकता का अर्थ है-विधि से आगे बढ़कर न्याय को स्वीकार करना। इसका अर्थ है-बहुमत की इच्छा से अधिक मूल्य-आधारित निर्णय को महत्व देना। लोकतंत्र केवल चुनाव नहीं है; लोकतंत्र एक संस्कार है।

डिजिटल युग और सार्वजनिक जीवन

डिजिटल माध्यमों ने संवाद का विस्तार किया है। हर व्यक्ति के पास अपनी बात कहने का मंच है। यह लोकतंत्र की उपलब्धि है। लेकिन इसी के साथ त्वरित प्रतिक्रिया, अधूरी जानकारी और उत्तेजित बहसों का वातावरण भी बढ़ा है। सोशल मीडिया पर जातीय और धार्मिक टिप्पणियाँ, अपमानजनक भाषा और भड़काऊ संदेश आसानी से फैल जाते हैं। यह स्थिति संविधान की मूल भावना के विरुद्ध है। स्वतंत्र अभिव्यक्ति का अर्थ यह नहीं कि समानता और गरिमा की उपेक्षा की जाए। अधिकार के साथ जिम्मेदारी भी जुड़ी होती है।

प्रतीक की सीमाएँ

आंबेडकर की प्रतिमा स्थापित करना महत्वपूर्ण हो सकता है, पर उससे अधिक महत्वपूर्ण है उनके विचार को समझना। गौतम बुद्ध ने विवेक और समझ पर बल दिया था। आंबेडकर ने भी यही आग्रह किया कि समाज प्रश्न करने की क्षमता विकसित करे और न्याय के आधार पर निर्णय ले। यदि विचार को समझे बिना केवल प्रतीकों का उपयोग किया जाए, तो वह समाज को गहराई नहीं देता। वह केवल सतही संतोष देता है।

सामाजिक लोकतंत्र की आवश्यकता

समानता केवल अवसर की नहीं, सम्मान की भी होनी

चाहिए। स्वतंत्रता केवल अधिकार की नहीं, विचार की भी होनी चाहिए। बंधुत्व केवल शब्द का नहीं, व्यवहार का होना चाहिए। जब तक सामाजिक संबंधों में यह परिवर्तन नहीं आता, तब तक लोकतंत्र अधूरा रहेगा। संविधान का वास्तविक अर्थ तभी समझा जाएगा, जब समाज स्वयं को बदलने का प्रयास नहीं, बल्कि संकल्प करेगा।

निष्कर्ष

समकालीन समय का संकट यह नहीं कि संविधान अनुपस्थित है; संकट यह है कि उसकी भावना को गंभीरता से नहीं लिया जा रहा। संविधान की रक्षा केवल न्यायालय नहीं करते। उसकी रक्षा नागरिक करते हैं–अपने व्यवहार से, अपने निर्णयों से, अपने सार्वजनिक आचरण से। यदि समाज बराबरी को व्यवहार में उतार ले, यदि स्वतंत्रता को जिम्मेदारी से जोड़े, यदि बंधुत्व को संबंधों का आधार बनाए–तभी लोकतंत्र सशक्त होगा। विचार को प्रतीक से ऊपर रखना ही आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

संदर्भ

1. भीमराव रामजी आंबेडकर, जाति का उच्छेद (।ददपीपसंजपवद व् िब्ेंजम, 1936, हिंदी संस्करण
2. संविधान सभा भाषण, 25 नवम्बर 1949
3. राज्य और अल्पसंख्यक, हिंदी संस्करण
4. भारत सरकार, भारत का संविधान (1 मई 2024 को यथावर्तमान), विधि एवं न्याय मंत्रालय
5. गौतम बुद्ध, धम्मपद (हिंदी अनुवाद)

रघुबीर सिंह 'नाहर' की कुंडलियाँ

चलना संकट काल में, बना लिया आसान।
अडिग बने चलते रहे, थे वह भीम महान।।
थे वह भीम महान, रोक ना पायी आंधी।
बहुत चली थी चाल, बने थे रोड़ा गांधी।।
कह नाहर कविराय, ज्योति बन यों ही जलना।
भारत बने महान, भीम के पथ पर चलना।।1।।

पहरा जब से लग रहा, खुलती नहीं जुबान।
रोज बदलते जा रहे, मानक और विधान।।
मानक और विधान, तोड़ना चाहें साथी।
सब धर्मों का देश, हाथ से निकला हाथी।।
कह नाहर कविराय, दांव नफरत का गहरा।
किया विपक्ष कमजोर, लगा कानूनी पहरा।।2।।

जिंदा दिल इन्सान का, मरता नहीं ज़मीर।
बेशक विपदा आ पड़े, करता पेश नज़ीर।।
करता पेश नज़ीर, बीच संकट में जाता।
तोड़ बाज के पंख, बचाकर चिड़िया लाता।।
कह नाहर कविराय, कभी ना होती निंदा।
याद करे संसार, रहे जन-जन में जिंदा।।3।।

बचकर चलना भीड़ में, रसना लगे लगाम।
पास न आयें वासना, दुनिया करे सलाम।।
दुनिया करे सलाम, चलो सच पथ पर राही।
इन्सानों के बीच, पड़ें ना दिल में खाही।।
कह नाहर कविराय, छोड़ जाना सब रचकर।
छाया माया जाल, सदा रहना है बचकर।।4।।

घोड़ों की घुड़दौड़ में, मही हुई बर्बाद।
उजड़ गयी हैं बस्तियां, कैसे हों आबाद।।
कैसे हों आबाद, अंधेरा छट न पाये।
नशा चढ़ा आकाश, दिशाएं कौन दिखाये।।
कह नाहर कविराय, बना मरहम फोड़ों की।
बिलख रहा संसार, दौड़ देखी घोड़ों की।।5।।

ताली जन को दे गये, मेरे भीम महान।
शीश नमन करते सभी, सुन्दर एक विधान।।
सुन्दर एक विधान, गणतंत्र प्यारा पाया।
लाल किले की शिखर, तिरंगा है लहराया।।
कह नाहर कविराय, धरा छायी खुशहाली।
सौ-सौ बार सलाम, दे गये जन को ताली।।6।।

दूरी नक्शों में रही, जुड़े तार से तार।
आ जाते हैं सामने, बढ़े दिलों में प्यार।।
बढ़े दिलों में प्यार, जाति के बंधन तोड़ो।
हो वैज्ञानिक सोच, सभी आडंबर छोड़ो।।
कह नाहर कविराय, मांग हो जन की पूरी।
देश बनें सब मीत, रहे ना फिर यह दूरी।।7।।

मिलना न्याय गरीब को, रही दूर की बात।
उगते ही छिपने लगा, फिर अंधेरी रात।।
फिर अंधेरी रात, मिलेंगे विष के प्याले।
तड़फेंगे सुकरात, मिलें ना कहीं निवाले।।
कह नाहर कविराय, जड़ों से कभी न हिलना।
बनकर शजर सुजान, लगाकर दिल से मिलना।।8।।

चमड़ा बाजार

श्याम लाल राही

अमन ने जब आठवीं कक्षा उत्तीर्ण की, तो आगे की पढ़ाई का प्रश्न उसके सामने गंभीर रूप से खड़ा हो गया। बलदेवपुर जहाँ उसका जन्म हुआ गंगा के कछार का एक दूरस्थ गाँव था। आसपास दूर-दूर तक कोई उच्च विद्यालय नहीं था। उसके दादा सोहनलाल मौर्य और पिता भूषण मौर्य की तीव्र इच्छा थी कि वह पढ़-लिखकर कुछ बने।

पिता के पास थोड़ी-बहुत जमीन अवश्य थी, पर वह इतनी नहीं थी कि परिवार का सुचारु निर्वाह हो सके। इस कारण उन्हें बटाई पर खेती करनी पड़ती थी। पिछड़ी जाति से आने वाले अमन का पुश्तैनी पेशा खेती-किसानी ही था। पर जिस वर्ष उसने आठवीं उत्तीर्ण की, उसी वर्ष उसकी बहन का विवाह भी तय था। दान-दहेज का विशेष लेन-देन नहीं हुआ, किंतु बारात की खातिरदारी और जात-बिरादरी के भोज में बैसाख की उपज का अधिकांश अनाज समाप्त हो गया।

अब उसके सामने दोहरी समस्या थी पहली, यदि आगे पढ़ना है तो कहाँ पढ़े? और दूसरी, पढ़ाई का खर्च कैसे जुटे? उसकी बहन का विवाह कस्बा कायमगंज के समीप हरैया गाँव में हुआ था। हरैया से कायमगंज का कॉलेज दो किलोमीटर से भी कम दूरी पर था; वहाँ रहकर पढ़ाई संभव थी।

परंतु यहाँ भी बाधाएँ कम न थीं। रिश्तेदारी नई-नई थी; हरैया के संबंधियों का स्वभाव और दृष्टिकोण क्या होगा, यह स्पष्ट नहीं था। दूसरी समस्या आर्थिक थी। यदि भूषण किसी प्रकार खर्च-पानी की व्यवस्था करते भी जबकि उनके लिए स्वयं यह संभव नहीं दिखता था तो क्या हरैया वाले इसे अपना अपमान न समझेंगे? और यदि वे राशन-पानी की अलग व्यवस्था करें, तो क्या उसे सहज भाव से स्वीकार किया जाएगा? इन आशंकाओं ने भूषण को असमंजस में डाल रखा था।

इन्हीं चिंताओं के बीच एक दिन बलवंत प्रसाद उनसे मिलने आ पहुँचे। बलवंत जाति से चमार थे, पर उनका मुख्य काम खेती ही था। गाँव के अन्य चमारों की तुलना में उनकी आर्थिक स्थिति कुछ बेहतर थी, यद्यपि इतनी सुदृढ़ भी नहीं कि वे किसी की विशेष सहायता कर सकें। उन्हें धान के बीज की आवश्यकता थी और इसी सिलसिले में वे भूषण के पास आये थे।

जुलाई का महीना आरंभ हो चुका था। विद्यालय खुल गये थे, और समय अपनी गति से आगे बढ़ रहा था। इसलिए धान की पौध डालने का समय हो गया था। भूषण ने बलवंत को नमस्कार करके अपना मंतव्य बताया, तो उसने कहा कि उसके पास धान का अच्छा बीज है और वह उसे बीज उपलब्ध करा देगा। बातों-बातों में उसने अपनी समस्या भी बलवंत के सामने रख दी।

कायमगंज के मोहल्ला पुठीसराय में बलवंत की लड़की की शादी हुई थी। उनका दामाद भी पढ़ रहा था। उनके समधी चमड़ा व्यापारी थे। वे चमड़ा घर पर तो नहीं रखते थे, परंतु उनका मुख्य धंधा सूखे हुए चमड़े को चमड़ा बाजार से खरीदना और कानपुर की टेनरियों (चर्म शोधन केंद्रों) को बेचना था। इसमें अच्छी आमदनी होती थी। व्यापारी उस सूखे चमड़े को 'कच्चा सोना' कहा करते थे। बलवंत के समधी का मकान बड़ा था और उसमें छत पर कुछ कमरे बने थे, जिन्हें उनके समधी किराये पर भी उठाते थे।

बलवंत ने सुझाया कि वे भूषण के लड़के को अपनी रिश्तेदारी में कमरा उपलब्ध करा सकते हैं। भूषण का बेटा चाहे तो उनकी लड़की के घर पर रहकर पढ़ाई कर सकता है और कमरे में ही खाना बनाकर खा सकता है।

भूषण की समस्या यह थी कि वह अपने लड़के को अभी छोटा समझते थे। उनका मानना था कि उनका बेटा अभी स्वयं खाना नहीं बना सकेगा। इस समस्या का समाधान भूषण की पत्नी ने निकाला। उसने अमन को खाना बनाने का प्रशिक्षण देना आरंभ कर दिया।

चूंकि कमरे में चूल्हा तो जलाया नहीं जा सकता था, इसलिए भूषण ने बलवंत से अनुरोध किया कि उनके लड़के को छत पर चूल्हा जलाने के लिए अलग जगह दिलवा दे, तो समस्या हल हो सकती है। भूषण की पत्नी ने कहा कि वह मिट्टी का एक ऐसा चूल्हा बना देगी, जिससे छत पर चूल्हे की आग का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

अमन की मां ने उसे सबसे पहले चूल्हा जलाना सिखाया, फिर आटा गूंथना सिखाया। उसने उसे खाना बनाने का एक सप्ताह तक प्रशिक्षण दिया। जब अमन खाना बनाना सीख

गया, तो यह तय हुआ कि वह बलवंत की रिश्तेदारी में ही रहकर पढ़ाई करेगा। यह सब निश्चित होने के बाद भूषण और अमन, बलवंत प्रसाद के साथ कायमगंज के मोहल्ला पुठीसराय स्थित उनकी लड़की के घर पहुंच गये।

बलवंत का दामाद अशोक कुमार ग्यारहवीं कक्षा में पढ़ रहा था। पढ़ाई में वह कुछ खास नहीं था, पर दुनियादारी की उसे अच्छी समझ थी। उसके पिता भी यह समझ चुके थे कि वह पढ़ाई में अधिक आगे शायद न बढ़ पाए। इसलिए उन्होंने उसे अपना धंधा सिखाना शुरू कर दिया। अशोक ने भी काम में रुचि लेनी आरंभ कर दी। उसी ने कॉलेज जाकर अमन का कक्षा नौ में दाखिला करवा दिया। इसके बाद अशोक और अमन साथ–साथ स्कूल जाने लगे। धीरे–धीरे दोनों के बीच मित्रता हो गयी।

एक वर्ष बीत गया। इस दौरान अमन खाना बनाने में पारंगत हो चुका था। एक साल बाद भूषण की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो गया और उसी वर्ष उन्होंने अपनी लड़की का गौना कर दिया।

जब भूषण के दामाद को यह पता चला कि उसका साला कायमगंज में एक चमार के घर रहकर पढ़ रहा है, तो उसने अपने ससुर से कहा कि अब अमन को वहां रहने की आवश्यकता नहीं है; उसे उसके घर पर ही रख लिया जाए। भूषण ने एक शर्त रख दी यदि उनका बेटा उसके घर रहेगा, तो उसका सारा खर्च वे स्वयं वहन करेंगे। उनके दामाद को इस पर कोई आपत्ति नहीं थी। बल्कि वह इस बात से संतुष्ट था कि साले के रहने का भार उस पर नहीं पड़ेगा। परिणामस्वरूप अमन अपनी बहन के घर रहने लगा और वहीं से पढ़ाई करने लगा। हालांकि अमन और अशोक की मित्रता बनी रही।

कॉलेज के अलावा, प्रायः छुट्टी के दिनों में अमन, अशोक के घर पहुंच जाता। दोनों मित्रों के बीच जो जाति की दीवार थी, वह धीरे–धीरे ढहने लगी। शुरुआत स्कूल में साथ खाने–पीने से हुई। फिर वे आपस में इतने घुल–मिल गये कि अमन, अशोक के घर भी खाना खाने लगा। हालांकि उसने यह बात न अपनी बहन को बताई और न घर पर किसी को। एक दिन यह बात खुल ही गयी। बहन और बहनोई ने तो कोई आपत्ति नहीं की, पर भूषण मौर्य और उनकी पत्नी ने अवश्य आपत्ति जताई।

उस दिन रविवार था। अमन, अशोक कुमार से मिलने उसके घर गया था। जलपान के बाद अशोक ने कहा, ''मुझे मेरे पिताजी ने अपने व्यवसाय में मदद के लिए चमड़ा बाजार बुलाया है, मैं वहां जा रहा हूं। तुमसे फिर मुलाकात होगी।'' तब अमन ने भी उसके साथ चमड़ा बाजार चलने का आग्रह किया। अशोक ने उसे मना किया कि वहां तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा, लेकिन इस पर भी अमन नहीं माना। वह अशोक के साथ चमड़ा बाजार चला गया। एक शिक्षण संस्था के पीछे स्थित एक बाग में यह बाजार लगता था।

अमन जब वहां पहुंचा, तो बदबू से उसका दिमाग भन्ना गया। बदबू अशोक को भी लग रही थी, पर उसे उतनी तीव्रता से महसूस नहीं हो रही थी, क्योंकि वह वहां प्रायः आता–जाता रहता था और खालों को इधर–उधर ढोने में अपने पिता की मदद भी करता था। उसके पिता फुटकर खाल विक्रेताओं से खालें खरीदते थे और उन्हें एक स्थान पर एकत्र करते थे। बाद में वे समस्त खालों को कानपुर की टेनरी में जाकर बेचते थे। अशोक खालों को एक जगह इकट्ठा करने में अपने पिता की सहायता करता था।

जिस दिन अमन, अशोक के साथ चमड़ा बाजार गया, उस दिन अशोक के पिता ने अपेक्षाकृत अधिक खरीदारी की। संयोग से उस दिन उनके कामवालों में दो आदमी कम आए थे। अशोक अपने पिता की मदद करने लगा, तो उसके पिता ने अमन से कहा, ''तुम भी आज काम कर लो, मजदूरी अच्छी दूंगा।'' अमन को बदबू बहुत आ रही थी, पर पैसों के लालच में वह अशोक के साथ काम करने लगा। उस दिन उसे अच्छी मजदूरी मिली। उन पैसों से उसकी अच्छी मदद हो गयी।

अमन अक्सर रविवार को अशोक के साथ काम पर जाने लगा। उसे जो आमदनी होती, उससे उसकी पढ़ाई का खर्च चल जाता। प्रारंभ में उसे बहुत बुरा लगा था, किंतु धीरे–धीरे उसे आदत हो गयी। वह जब तक कायमगंज में पढ़ता रहा, इसी प्रकार अपना खर्च निकालता रहा। बाद में इंटरमीडिएट उत्तीर्ण करने के पश्चात वह अध्यापक हो गया।

अध्यापक बनने के बाद भी अमन ने अपना रिश्ता चमड़ा बाजार से नहीं तोड़ा। उसने अनुभव किया कि चमड़े के काम में काफी मुनाफा है। उसके पास वेतन का जो पैसा आता, उससे वह स्वयं चमड़ा खरीदने लगा और जब कानपुर के बड़े चमड़ा व्यापारी आते, तो उन्हें बेच देता।

चार–पांच वर्ष तक यह काम करने के बाद उसने छोटे व्यापारियों से सीधे चमड़ा खरीदना और स्वयं कानपुर जाकर बेचना प्रारंभ कर दिया। चूंकि चमड़ा बाजार रविवार को लगता था, इसलिए उसे अपनी नौकरी में कोई परेशानी नहीं होती थी। धीरे–धीरे उसे धंधे की पूरी समझ हो गई।

जिस लड़की से उसका विवाह हुआ, उसके पिता भी चमड़े का व्यवसाय करते थे। अमन ने अपनी पत्नी को भी इस

काम में साथ लगा लिया। उसे अपने ससुर का भी सहयोग मिलने लगा। अब वह बड़े स्तर पर काम करने लगा था। उसका ससुर एक चमड़ा व्यापारी का मुंशी था।

जब शिक्षा विभाग में उसकी शिकायत हुई, तो उसने सोच-समझकर पहले एक वर्ष का और फिर तीन वर्ष का अवैतनिक अवकाश ले लिया। इस दौरान उसने अपने धंधे का खूब विकास किया।

अब उसने कायमगंज में पके-पकाए चमड़े की एक दुकान भी खुलवा दी, जहां कभी वह स्वयं और कभी उसकी पत्नी बैठती। चमड़ा कारीगर उससे चमड़ा खरीदते थे। इसके बाद उसने कुछ चमड़ा कारीगरों को लगाकर देशी जूते बनवाना और बेचना प्रारंभ किया। आगे चलकर क्रोम के चमड़े के जूते बनवाने वाले जूता व्यापारी भी उसके संपर्क में आ गए।

अंततः उसने नौकरी छोड़ दी और एक छोटा-सा जूता निर्माण कारखाना स्थापित कर लिया। उसके निरंतर विकास को देखकर लोगों में जलन होने लगी। उसके साथी अध्यापक और अन्य परिचित उससे प्रभावित थे।

वह अक्सर कहा करता था कि वह आज जो कुछ भी है, वह सब चमड़ा बाजार की ही देन है। उसके कुछ पिछड़ी जाति के रिश्तेदार नाक-भौं सिकोड़े कि किसान होकर चमड़े का धंधा करता है, तो वह उत्तर देता—जब बनिया और ब्राह्मण जूते की दुकान खोलते हैं, कसाईघर चलाते हैं, तब तो कोई कुछ नहीं कहता; मेरे काम पर ही आपत्ति क्यों? यह भी तो एक धंधा है। फिर जब इस धंधे में अच्छी कमाई हो, तो क्यों न किया जाए?

धीरे-धीरे सबका मुंह बंद हो गया। अमन अब एक सफल व्यापारी और संपन्न व्यक्ति था। चमड़ा बाजार से उसका रिश्ता और भी मजबूत हो गया था।

गुरु रविदास पचासा : एक समतामूलक काव्य-दृष्टि का सशक्त हस्तक्षेप

लेखक : देवचंद्र भारती 'प्रखर'

प्रकाशक : आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन

समकालीन हिंदी साहित्य में संत परंपरा का पुनर्पाठ अक्सर भावनात्मक श्रद्धांजलि तक सीमित रह जाता है, परंतु 'गुरु रविदास पचासा' इस प्रवृत्ति से अलग एक वैचारिक हस्तक्षेप के रूप में सामने आती है। यह कृति संत रविदास को केवल भक्ति-परंपरा के संत के रूप में नहीं, बल्कि समता, श्रम-गरिमा और सामाजिक न्याय की सशक्त चेतना के रूप में स्थापित करती है।

पचास पदों के माध्यम से लेखक संत रविदास की वाणी को समकालीन संदर्भों में पुनर्स्थापित करते हैं। 'बेगमपुरा' यहाँ आध्यात्मिक मुक्ति का रूपक मात्र नहीं है; वह जाति-विहीन, शोषण-मुक्त और मानवीय गरिमा पर आधारित समाज की स्पष्ट परिकल्पना है। कृति का केंद्रीय स्वर समतामूलक सामाजिक संरचना की पुनर्स्थापना है।

लेखक श्रद्धा और आलोचनात्मक विवेक के संतुलन के साथ संत-चेतना का पुनर्पाठ करते हैं। यह संत परंपरा को निष्क्रिय भक्ति के क्षेत्र से निकालकर सक्रिय सामाजिक विचार के क्षेत्र में स्थापित करता है। भाषा सरल, स्पष्ट और संप्रेषणीय है। अनावश्यक अलंकारिकता से मुक्त यह काव्य अपनी वैचारिक दृढ़ता के कारण प्रभावशाली बनता है।

कृति की विशेषता यह है कि इसमें भावुकता की अति नहीं, बल्कि विचार की स्पष्टता है। संत रविदास की लोकधर्मी वाणी को समकालीन सामाजिक यथार्थ से जोड़ते हुए लेखक यह संकेत देते हैं कि परंपरा तभी जीवित रहती है जब वह वर्तमान संघर्षों से संवाद करती है।

आज के समय में, जब सामाजिक असमानताएँ नए रूपों में विद्यमान हैं, संत रविदास की समतामूलक दृष्टि का पुनर्पाठ विशेष महत्व रखता है। यह पुस्तक उसी आवश्यकता की सार्थक पूर्ति करती है। यह कृति साहित्य को सामाजिक न्याय के विमर्श से जोड़ते हुए उसे वैचारिक प्रतिबद्धता प्रदान करती है।

आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक अपने सुलभ मूल्य और स्पष्ट प्रस्तुति के कारण व्यापक पाठक-वर्ग तक पहुँचने की क्षमता रखती है।

गुरु रविदास पचासा का विमोचन संपन्न

दिनांक 1 फरवरी 2026, रविवार को सीर गोवर्धनपुर, वाराणसी में 'गुरु रविदास पचासा' पुस्तक का विधिवत् विमोचन संपन्न हुआ। कार्यक्रम गरिमामय एवं वैचारिक वातावरण में आयोजित किया गया।

मुख्य वक्ता माननीय प्रबुद्ध नारायण बौद्ध ने पचासा का पाठ करते हुए उसकी वैचारिक विशेषताओं पर प्रकाश डाला। उन्होंने वर्तमान सामाजिक संदर्भ में गुरु रविदास पचासा की प्रासंगिकता और उपयोगिता को स्पष्ट किया तथा संत रविदास की वाणी के सामाजिक–समानतामूलक संदेश को रेखांकित किया।

कार्यक्रम में बहुजन सांस्कृतिक मंच, जनपद शाखा दरौली (गाजीपुर) से जुड़े मिशनरी जादूगर पिंटू कुमार गौतम, कमलेश निराला, रमाशंकर भारती, जयप्रकाश रविदास, शिवकुमार राही, हरींद्र भारती तथा मिशन गायक अखिलेश कुमार गौतम सहित विनीत सेन, सुनील भारती, वीरेंद्र कुमार आदि अनेक कार्यकर्ता एवं साहित्यप्रेमी उपस्थित रहे।

यह कार्यक्रम आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन के तत्वावधान में आयोजित किया गया। कार्यक्रम के अंत में उपस्थित जनों ने पुस्तक के माध्यम से संत रविदास की वैचारिक विरासत को जन–जन तक पहुँचाने का संकल्प व्यक्त किया।

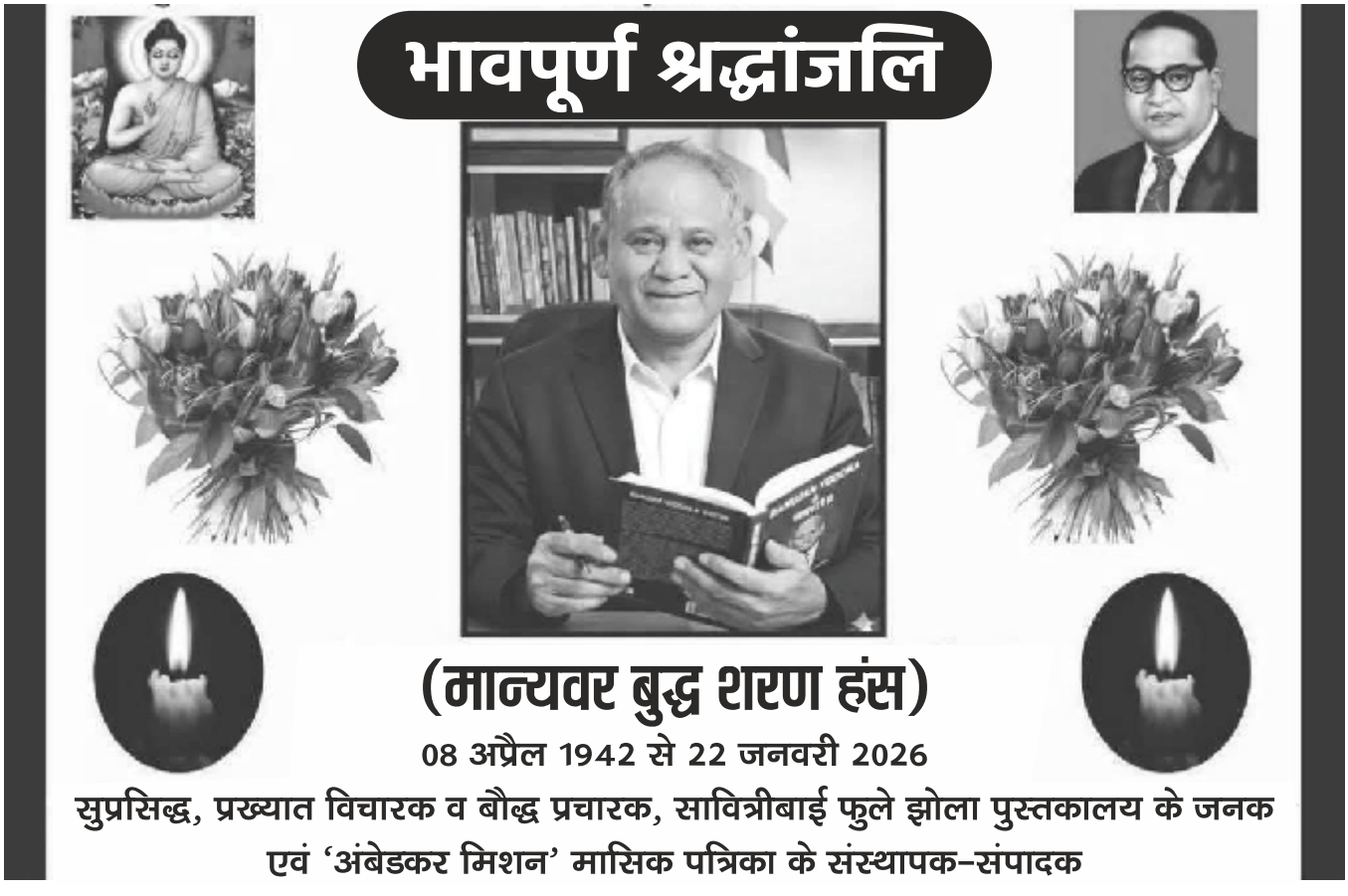

आंबेडकरवादी साहित्य पत्रिका के प्रतिनिधि

- डॉ. नविला सत्यादास (पंजाब) 9463615861
- श्याम लाल राही (बरेली, उत्तर प्रदेश) 9456045567
- डॉ. राम मनोहर राव (बरेली, उत्तर प्रदेश) 7060240326
- डॉ. रमेश कुमार (गुजरात) 9719025700
- सुरेश सौरभ गाजीपुरी (गाजीपुर, उत्तर प्रदेश) 9452846472
- सुरेश कुमार राजा (बांदा, उत्तर प्रदेश) 8756140206
- रघुबीर सिंह 'नाहर' (राजस्थान) 9413058580
- अश्वनी कुमार (लखनऊ, उत्तर प्रदेश) 9450159443
- डॉ. बी.आर. बुद्धप्रिय (बरेली, उत्तर प्रदेश) 9412318482
- डॉ. मुकुंद रविदास (झारखंड) 7488199101
- डॉ. परसराम रामजी रगडे (महाराष्ट्र) 9850492933
- भंते संघविजय (बिहार) 8539003521
- शैलेन्द्र सागर (बिहार) 8194931411
- मनोहर लाल 'प्रेमी' (लखनऊ, उत्तर प्रदेश) 8887792827
- राधेश प्रताप 'विकास' (इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश) 9956824322
- कर्मशील भारती (दिल्ली) 9968297866
- प्रबुद्ध नारायण बौद्ध (चंदौली, उत्तर प्रदेश) 9005441713
- मेजर लाल बिहारी प्रसाद (कुशीनगर, उत्तर प्रदेश) 9450241748
- पिंटू कुमार गौतम (गाजीपुर, उत्तर प्रदेश) 8543901668

'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका की सदस्यता हेतु विवरण

सदस्यता शुल्क :

वार्षिक : 350/–
द्विवार्षिक : 650/–
त्रैवार्षिक : 1000/–
आजीवन : 7000/–

भुगतान विकल्प :

Bank Account Number	:	35332395763
Account Holder	:	Devachandra Bharati
Bank Name	:	STATE BANK OF INDIA
IFSC Code	:	SBIN0012302

Paytm / PhonePe / GPay : 9454199538

आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन

के तत्वावधान में

हर घर आंबेडकरवादी साहित्य

(वैचारिक जागरण का संकल्प)

अभियान आरंभ : 01 फरवरी 2026

(गुरु रविदास जयंती के अवसर पर)

समाज में समता, न्याय और वैज्ञानिक दृष्टि की स्थापना के लिए आवश्यक है कि डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचार व्यापक रूप से पढ़े और समझे जाएँ। इसी उद्देश्य से ''हर घर आंबेडकरवादी साहित्य'' का संकल्प प्रस्तुत किया गया है। यह पहल समाज में वैचारिक जागरण और अध्ययन की संस्कृति को विकसित करने की दिशा में एक संगठित बौद्धिक हस्तक्षेप है।

'आंबेडकरवादी साहित्य' एक वैचारिक, आलोचनात्मक एवं शोधपरक त्रैमासिक हिंदी पत्रिका है, जिसमें आंबेडकर-दर्शन के आधार पर समाज, संस्कृति, राजनीति और इतिहास से जुड़े प्रश्नों का गंभीर विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है। यह पत्रिका आंबेडकरवादी चिंतन, शोध और रचनात्मक अभिव्यक्ति का एक सशक्त मंच है।

इस संकल्प का उद्देश्य है कि आंबेडकर-दर्शन पर आधारित साहित्य अधिक से अधिक घरों तक पहुँचे, अध्ययन और विमर्श की प्रवृत्ति विकसित हो तथा समाज में समतामूलक और लोकतांत्रिक चेतना सुदृढ़ हो।

इस दिशा में सभी जागरूक पाठकों, विद्यार्थियों, चिंतकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं से अपेक्षा है कि वे आंबेडकरवादी साहित्य को प्रत्येक घर तक पहुँचाने के संकल्प में सहभागी बनें और वैचारिक जागरण की इस प्रक्रिया को व्यापक बनाएँ।

आंबेडकरवादी साहित्य प्रकाशन

आंबेडकर-दर्शन पर आधारित साहित्य के प्रकाशन हेतु समर्पित

वैचारिक सहयोग

- आंबेडकरवादी साहित्य का विद्वत-मंडल (GOAL)
- बहुजन सांस्कृतिक मंच, जनपद शाखा-गाजीपुर

संपर्क : मोहनलालगंज, लखनऊ (उ.प्र.)-226301 मो.: 9219937101, 8543901668
ई-मेल : ambedkarvadisahitya@gmail.com, वेबसाइट : www.ambedkarvadisahitya.com

जनपद फतेहपुर की तहसील खागा के ब्लॉक हथगाम के सुदूर ग्रामीण अंचल में बसे आंबेडकर-ग्राम चक इटैली में 28 वर्ष पूर्व यहीं के निवासी सेवानिवृत्त ए.डी.ओ. एवं महाकवि परिनिब्बुत विश्वेश्वर प्रसाद जी द्वारा स्थापित यह शिक्षण संस्थान वर्तमान में डॉ. आर.एम. राव मनोहर के प्रबंधन में 14 योग्य शिक्षक -शिक्षिकाओं के कुशल अध्यापन कार्य से सुचारु रूप से चल रहा है। इसकी अनेक विशेषताओं में से प्रमुख हैं :

1. यू पी बोर्ड द्वारा संचालित हाई स्कूल परीक्षा का सतत 95% या अधिक परिणाम ।
2. उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा हाई स्कूल तक मान्यता प्राप्त स्कूल में सभी वर्ग के बच्चों का प्रवेश ।
3. नाम मात्र का शुल्क।
4. उच्च कोटि का अनुशासन।
5. 50% से अधिक बालिकाओं का प्रवेश एवं उनके लिए अलग शौचालय आदि की व्यवस्था।
6. इंग्लिश मीडियम नर्सरी।
7. नर्सरी और प्राइमरी हेतु अलग भवन तथा विशाल प्रांगण ।
8. बिजली, पानी, फर्नीचर की व्यवस्था।
9. अति निर्धन बच्चों की निःशुल्क शिक्षा।
10. खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन।

संपर्क : प्रबंधक - डॉ. राम मनोहर राव, मो. 7060240326